वार्षिक रु. २००, मूल्य रु. २५

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन
विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६३ अंक ६ जून २०२५

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६३

अंक ६

विवेक-ज्योति

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

ज्येष्ठ, सम्वत् २०८२

जून, २०२५

अनुक्रमणिका

* बहु रूपों में खड़े तुम्हारे आगे, और कहाँ है ईश : विवेकानन्द २४६
* भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा सम्पूर्ण विधि-विधान : एक सम्पूर्ण अवलोकन (अशोक पाण्डेय) २४८
* जप और ध्यान (स्वामी ब्रह्मेशानन्द) २४९
* महान पत्थर का मुख (नथानियल हॉथोर्न) २५३
* (बच्चों का आंगन) श्रीरामकृष्ण देव की गंगाभक्ति और गंगा दशहरा (श्रीमती मिताली सिंह) २५८
* योग-साधना और ब्रह्मचर्य (सन्तोष) २५९
* नादानुसन्धान विधि : आत्मसाक्षात्कार की ओर एक कदम (डॉ. गीता योगेश भट्ट) २६२
* (युवा प्रांगण) आधुनिक चुनौतियाँ और उत्कृष्टता प्राप्त करने का मार्ग (स्वामी गुणदानन्द) २६७
* अध्यात्म और सतत विकास में सन्तुलन चाहिए (श्री नरेन्द्र मोदी) २७०
* गंगा – हम तो चलते जायेंगे (स्वामी मैथिलीशरण) २७४
* नीतिविमर्श: (डॉ. सत्येन्दु शर्मा) २७५
* स्वामी ब्रह्मानन्द और भुवनेश्वर (स्वामी तन्निष्ठानन्द) २७६
* सूक्ष्म और स्थूल (स्वामी सत्यरूपानन्द) २८०
* पारिवारिक क्लेश से मुक्ति कैसे मिले? (अरुण चूड़ीवाल) २८१
* (भजन एवं कविता) रथ में शोभित जगदीश्वर (आनन्द तिवारी) २५७, * जगन्नाथ का बुलावा आया है (सदाराम सिन्हा) २६६, * जयतु जयतु जय जगन्नाथ प्रभु (डॉ. ओमप्रकाश वर्मा), * गंगा-महिमा (डॉ. अनिल कुमार), * अब मैं हारा हे भगवान! (बाबूलाल परमार) २६९, * श्रीरामकृष्ण-स्तुति-२ (रामकुमार गौड़) २७४
* पुस्तक समीक्षा २८६

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) २४५
पुरखों की थाती २४५
सम्पादकीय २४७
रामगीता २५५
प्रश्नोपनिषद् २७३
श्रीरामकृष्ण-गीता २७५
गीतातत्त्व-चिन्तन २८२
साधुओं के पावन प्रसंग २८५
समाचार और सूचनाएँ २८७

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : ०९८२७१ ९७५३५ (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक) रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

 ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति २५/-	२००/-	१०००/-	२०००/-
विदेशो में (हवाई डाक से)	६० यू.एस. डॉलर	३०० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिए	३००/-	१५००/-	

भारत में रजिस्टर्ड पोस्ट से माँगने का शुल्क प्रति अंक अतिरिक्त ३०/- देय होगा ।

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : विवेकानन्द आश्रम, रायपुर, छ.ग.
अकाउण्ट नम्बर : 1385116124
IFSC : CBIN0280804

सदस्यता के नियम

(१) 'विवेक-ज्योति' पत्रिका के सदस्य किसी भी माह से बनाये जाते हैं। सदस्यता-शुल्क की राशि यथासम्भव स्पीड-पोस्ट मनिआर्डर से भेजें या बैंक-ड्राफ्ट – 'रामकृष्ण मिशन' (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवायें। यह राशि भेजते समय एक अलग पत्र में अपना पिनकोड सहित पूरा पता और टेलीफोन नम्बर आदि की पूरी जानकारी भी स्पष्ट रूप से लिख भेजें।

(२) पत्रिका को निरन्तर चालू रखने हेतु अपनी सदस्यता की अवधि पूरी होने के पूर्व ही नवीनीकरण करा लें।

(३) **विवेक ज्योति कार्यालय से प्रतिमाह सभी सदस्यों को एक साथ पत्रिका प्रेषित की जाती है। डाक की अनियमितता के कारण कई बार पत्रिका नहीं मिलती है। अत: पत्रिका प्राप्त न होने पर अपने समीप के डाक-विभाग से सम्पर्क एवं शिकायत करें। इससे अनेक सदस्यों को पत्रिका मिलने लगी है।** पत्रिका न मिलने की शिकायत माह पूरा होने पर ही करें। **अंक उपलब्ध रहने पर ही पुनः प्रेषित किया जायेगा।**

(४) सदस्यता, एजेंसी, विज्ञापन या अन्य विषयों की जानकारी के लिये 'व्यवस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय' को लिखें।

जून माह के जयन्ती और त्यौहार

०५	गंगा दशहरा
११	स्नान-यात्रा
२७	जगन्नाथ रथयात्रा
६,२२	एकादशी

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

आवरण पृष्ठ पर दर्शाया गया मन्दिर रामकृष्ण मठ, लेखम्बा, अहमदाबाद, गुजरात का है।

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री अनुराग प्रसाद, कौशाम्बी, गाजियाबाद (उ.प्र.)	८,२०१/-
श्री अनुराग प्रसाद, कौशाम्बी, गाजियाबाद (उ.प्र.)	६,७०१/-

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन निःशुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

LETTERS OF SWAMI VIVEKANANDA

Revised & Enlarged Edition in 4 Volumes

"In centuries to come he [Swami Vivekananda] will be remembered as one of the main moulders of the modern world."
—Distinguished Historian and Indologist, A. L. Basham

We are delighted to present to readers the revised & enlarged edition of the *Letters of Swami Vivekananda* (released on 1st March 2025).

The letters are arranged chronologically, helping readers trace Swamiji's movements, activities, and the evolution of his ideas over the time. This arrangement also provides insights into the early history of the Ramakrishna-Vivekananda Movement.

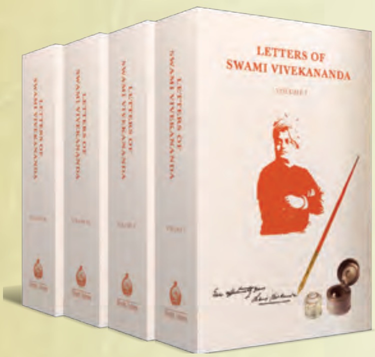

Comprehensive footnotes, charts, and appendices have been included to provide the historical contexts of the letters. There are also some photographs relevant to the contents of the letters.

This edition comprises 815 letters in all, included in four volumes:

- **Volume I** : Letters from 1888 to 1894
- **Volume II** : Letters from 1895 to 1896
- **Volume III** : Letters from 1897 to 1899
- **Volume IV** : Letters from 1900 to 1902

ORDER NOW AT 15% LESSER PRICE

Rs. ~~2000~~/- Rs. 1700/- for one Set

Packaging & Postage 250/-

Please write to: **Advaita Ashrama,**
5 Dehi Entally Road, Kolkata 700 014, India
Phones: +91-7439664481, 7603067067;
Email: mail@advaitaashrama.org
Buy Online: https://shop.advaitaashrama.org/

Scan to Order

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !
आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।
इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी
भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर'!
Sudarshan Saur
सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए
सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए
सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए
घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त
समझदारी की सोच!
३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!
आजीवन सेवा
लाखां संतुष्ट ग्राहक
विस्तृत डीलर नेटवर्क
Sudarshan Saur®
www.sudarshansaur.com
Toll Free
1800 233 4545
E-mail: office@sudarshansaur.com

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६३ **जून २०२५** **अंक ६**

श्रीगंगा-स्तुतिः

अभिनवबिसवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
र्मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला
जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः
क्षपितकलिकलङ्का जाह्नवी नः पुनातु ।।

जो भगवान विष्णु के चरणकमलों की नवीन (कोमल) मृणाल है (अर्थात् विष्णु के पादपद्मों के नीचे दण्डाकार में अवस्थित) तथा महादेव के मस्तक की मालती-मालास्वरूप है (अर्थात् हरमस्तक पर पतित), वह मुक्तिरूपी लक्ष्मी की विजयध्वजा जय को प्राप्त हो, वह कलिकलुष-नाशिनी जाह्नवी हमें पवित्र करे।।

पुरखों की थाती

स्वभावेन हि तुष्यन्ति देवाः सत्पुरुषाः पिताः।
ज्ञातयः स्नानपानाभ्यां वाक्यदानेन पण्डिताः।।८६९।।

– देवता, सज्जन और पिता – व्यक्ति के स्वभाव से ही सन्तुष्ट हो जाते हैं, जबकि सगे-सम्बन्धी अच्छे खान-पान से और विद्वान् लोग मधुर वाणी से सन्तुष्ट होते हैं।

स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फलमश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद् विमुच्यते।।८७०।।

– जीवात्मा स्वयं कर्म करती है और स्वयं उसके भले-बुरे फल भोगती है। वह स्वयं ही संसार में आवागमन करते हुए भटकती है और स्वयं ही इससे मुक्ति पा लेती है।

स्वर्गस्थितानामिह जीवलोके
चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे।
दानप्रसंगो मधुरा च वाणी
देवार्चनं ब्राह्मणतर्पणं च।।८७१।।

– स्वर्ग से इस लोक में आनेवालों में ये चार लक्षण दीख पड़ते हैं – दान करने में रुचि, मधुर वाणी, देवताओं की उपासना और सज्जनों की सेवा।

बहु रूपों में खड़े तुम्हारे आगे, और कहाँ है ईश : विवेकानन्द

समस्त उपासनाओं का यही धर्म है कि मनुष्य शुद्ध रहे तथा दूसरों के प्रति सदैव भला करे। वह मनुष्य जो शिव को निर्धन, दुर्बल तथा रुग्ण व्यक्ति में भी देखता है वही सचमुच शिव की उपासना करता है, परन्तु यदि वह उन्हें केवल मूर्ति में ही देखता है तो कहा जा सकता है कि उसकी उपासना अभी नितान्त प्रारम्भिक ही है। यदि किसी मनुष्य ने किसी एक निर्धन मनुष्य की सेवा-शुश्रूषा बिना जाति-पाँति अथवा ऊँच-नीच के भेद-भाव के यह विचार कर की है कि उसमें साक्षात् शिव विराजमान हैं, तो शिव उस मनुष्य से दूसरे एक मनुष्य की अपेक्षा, जो कि उन्हें केवल मन्दिर में देखता है, अधिक प्रसन्न होंगे। (५/३८-३९)

जो व्यक्ति अपने पिता की सेवा करना चाहता है, उसे अपने भाइयों की सेवा सबसे पहले करनी चाहिए, इसी प्रकार जो शिव की सेवा करना चाहता है, उसे उनकी सन्तान की, विश्व के प्राणिमात्र की पहले सेवा करनी चाहिए। (५/३९)

स्वार्थपरता ही अर्थात् स्वयं के सम्बन्ध में पहले सोचना सबसे पड़ा पाप है। जो मनुष्य यह सोचता रहता है कि मैं ही पहले खा लूँ, मुझे ही सबसे अधिक धन मिल जाये, मैं ही सर्वस्व का अधिकारी बन जाऊँ, मेरी ही सबसे पहले मुक्ति हो जाये तथा मैं ही औरों से पहले सीधा स्वर्ग को चला जाऊँ, वही व्यक्ति स्वार्थी है। निःस्वार्थ व्यक्ति तो यह कहता है, 'मुझे अपनी चिन्ता नहीं है, मुझे स्वर्ग जाने की भी कोई आकांक्षा नहीं है, यदि मेरे नरक में जाने से भी किसी को लाभ हो सकता है, तो भी मैं उसके लिए तैयार हूँ।'' यह निःस्वार्थपरता ही धर्म की कसौटी है। (५/३९-४०)

हम दूसरों के प्रति दया प्रकाशित कर पाते हैं, यह हमारा एक विशेष सौभाग्य है, क्योंकि इस प्रकार के कार्य के द्वारा ही हमारी आत्मोन्नति होती है। दीन जन मानो इसलिए कष्ट पाते हैं कि हमारा कल्याण हो। अतएव दान करते समय दाता ग्रहीता के सामने घुटने टेके और धन्यवाद दे, ग्रहीता दाता के सम्मुख खड़ा हो जाये और अनुमति दे। सभी प्राणियों में विद्यमान प्रभु का दर्शन करते हुए उन्हीं को दान दो। (७/८३)

कर्म करना धर्म नहीं है, फिर भी यथोचित रूप से कर्म करना मुक्ति की ओर ले जाता है। वास्तव में समग्र दया अज्ञान है, क्योंकि हम दया किस पर करेंगे? क्या तुम ईश्वर को दया की दृष्टि से देख सकते हो? फिर ईश्वर छोड़कर और है ही क्या? ईश्वर को धन्यवाद दो कि उसने तुम्हारी आत्मोन्नति के लिए यह जगत् रूप नैतिक व्यायामशाला तुम्हें प्रदान की है। यह कभी मत सोचना कि तुम इस जगत् की सहायता कर सकते हो। तुम्हें यदि कोई गाली दे तो उसके प्रति कृतज्ञ होओ। (७/८२)

आत्मप्रतिष्ठा नहीं, आत्मत्याग ही सर्वोच्च लोक का धर्म है। धर्म की उत्पत्ति प्रखर आत्म-त्याग से ही होती है। अपने लिए कुछ भी मत चाहो। सब दूसरों के लिए करो। यही ईश्वर में निवास करना, उन्हीं में विचरण करना और अपने अपनेपन को उन्हीं में प्रतिष्ठित पाना है। (२/२५४)

जिसकी हम सहायता करते हैं – उसे साक्षात् नारायण मानना चाहिए। मनुष्य की सहायता द्वारा ईश्वर की उपासना करना क्या हमारा परम सौभाग्य नहीं है? (३/५२)

ब्रह्म और परमाणु कीट तक, सब भूतों का है आधार
एक प्रेममय, प्रिय, इन सबके चरणों में दो तन-मन वार।
बहु रूपों में खड़े तुम्हारे आगे, और कहाँ है ईश?
व्यर्थ खोज, यह जीव-प्रेम की ही सेवा पाते जगदीश।
(९/३२५)

सम्पादकीय

चित्तशुद्धि का सहज उपाय – क्रन्दन

अपार कृपा के सागर, अनन्त लीलामय भगवान के दर्शन हेतु चित्त की शुद्धि और उनकी प्राप्ति हेतु व्याकुलता को प्रमुख आधार माना गया है। चित्त की शुद्धि अर्थात् चित्त में भगवान को छोड़कर अन्य कुछ भी न हो। व्याकुलता अर्थात् उन्हें पाने की तीव्र व्याकुलता, आतुरता, व्यग्रता हो। कैसे? जैसे किसी के सिर में आग लग जाये और सिर जलने लगे, तो उस तडपन से व्यग्र होकर वह केवल पानी-पानी ही चिल्लाता है, पानी को ही खोजते हुये जलाशय की ओर दौड़ा चला जाता है और उसमें कूदकर अपनी ज्वाला की दाहकता को शान्त करता है, ठीक उसी प्रकार एक सच्चे भक्त के हृदय में केवल भगवान ही हों और भव-ज्वाला की दाहकता से शान्ति पाने हेतु वह केवल भगवान की ही खोज कर रहा हो, केवल भगवान को पाने के लिये व्यग्र हो, तो उसे अवश्य भगवान मिलते हैं, चित्त में शान्ति मिलती है। कृष्ण-भक्त सूरदासजी को संसार की किसी वस्तु में सुख नहीं मिला, उन्हें सुख मिला तो केवल उस बाल-गोपाल की लीला में –

मेरो मन अनत कहाँ सुख पावे।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी, पुनि जहाज पर आवै।।

मीरा ने इस अनित्य छल-छद्मयुक्त जगत के सम्बन्धों का कटु अनुभव करने के बाद ही जगत के सभी आशा-केन्द्रों को छोड़कर एकमात्र गिरिधर गोपाल को जीवन का ध्रुवतारा बनाया और उनकी हृदय-वीणा की तन्त्रिकाओं से झंकृत हुई – **मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई।**

ईश्वर-प्राप्ति की ऐसी व्याकुलता कब आती है? भगवान श्रीरामकृष्ण देव से अश्विनी कुमार ने पूछा था – भगवान को हम कैसे प्राप्त करें? तो श्रीरामकृष्ण देव ने कहा था – ''अजी! चुम्बक जिस प्रकार लोहे को खींचता है, उसी प्रकार वे हमलोगों को खींच रहे हैं। लोहे में कींच रहने से वह चुम्बक से चिपक नहीं सकता। रोते-रोते जब कींच धुल जाता है, तब लोहा अपने आप ही चुम्बक के साथ जुड़ जाता है।''[१]

श्रीरामकृष्ण देव अपने साधना-काल में माँ काली के दर्शन हेतु व्यग्र होकर रोते थे, जिसे देखकर मन्दिर परिसर में स्थित दर्शनार्थी विस्मित हो जाते थे। महेन्द्रनाथ गुप्त श्री 'म' दूसरी बार श्रीरामकृष्ण देव के दर्शनार्थ दक्षिणेश्वर गये। उन्होंने श्रीरामकृष्ण से पूछा – कैसी अवस्था हो, तो ईश्वर के दर्शन हों? श्रीरामकृष्ण ने उत्तर दिया – ''खूब व्याकुल होकर रोने से ईश्वर के दर्शन होते हैं। स्त्री या लड़के के लिये लोग आँसुओं की धारा बहाते हैं, रुपये के लिये रोते हुये आँखें लाल कर लेते हैं, पर ईश्वर के लिये कोई कब रोता है? ईश्वर को व्याकुल होकर पुकारना चाहिये।''[२]

चित्तशुद्धि हेतु सरल उपाय बताते हुये गोस्वामी तुलसीदास जी विनय-पत्रिका में कहते हैं कि रघुपति-भक्ति रूपी वारि से प्रक्षालित चित्त में बिना प्रयास के ही भगवत् लीला समझ में आने लगती है।

रघुपतिभगति वारि छालित चित बिनु प्रयास ही सूझै।।
तुलसीदास कह चिद-विलास जग बूझत बूझत बूझै।।५।[३]

सूरदासजी श्रीकृष्ण से प्रार्थना करते हैं – हे प्रभु, ऐसा दिन कब आयेगा, जब मेरा चित्त निरन्तर आपके चरणों में रहेगा, प्रेम-पुलकित हो मेरी आँखें सजल हो जाएँगी –

ऐसो कब करिहो गोपाल।
चित्त निरन्तर चरनन अनुगत रसना चरित रसाल।
लोचन सजल प्रेम पुलकित तन कर कंजनि दल माल।[४]

सूरदासजी ने गोपियों की विरह-वेदना का मार्मिक चित्रण किया है, जिसमें गोपियाँ कहती हैं –

निस दिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत पावस ऋतु हम पर, जब ते स्याम सिधारे।।

श्रीकृष्ण-प्रेम में पागल मीरा की विरह-वेदना लोक प्रसिद्ध है। वहीं बंगाल के पुंडरीकाक्ष हरि-रस-मदिरा-पान में मत्त होकर क्रन्दन करने लगते हैं –

हरि रस मदिरा पिये मम मानस मात रे।
एक बार लुटाये अवनी तल हरि हरि बोले काँदो रे।।[५]

OOO

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. श्रीरामकृष्ण-वचनामृत, पृ. २/१२७८ **२.** वही, पृ. १/९ **३.** विनय-पत्रिका **४.** स्तवभजनांजलि, पृ.१६६ **५.** स्तवभजनांजलि, पृ. १७१

भगवान जगन्नाथ की रथयात्रा सम्पूर्ण विधि-विधान : एक अवलोकन

अशोक पाण्डेय, भुवनेश्वर, उड़िसा

भगवान जगन्नाथ की विश्व प्रसिद्ध रथयात्रा २०२५ में २७ जून को है। वह पवित्रतम तिथि है – आषाढ़ शुक्ल द्वितीया। भगवान जगन्नाथ, जगत के नाथ हैं, जिन्हें भारत के चार धामों में नाथ से ही संबोधित किया जाता है। जैसे बदरीनाथ, रामेश्वरनाथ, द्वारिकानाथ तथा पुरी धाम के जगन्नाथ। यह भी सच है कि भारत के चारों धामों का निर्माण भारत की चार दिशाओं में किया गया है। जैसे – उत्तर दिशा में बदरीनाथ, दक्षिण दिशा में रामेश्वरनाथ, पश्चिम दिशा में द्वारकानाथ तथा पूर्व दिशा में जगन्नाथ धाम कहते हैं। कहते हैं कि सतयुग का धाम बदरीनाथ है। त्रेतायुग का धाम रामेश्वरम् है। द्वापरयुग का धाम द्वारका है तथा कलियुग का अन्यतम धाम जगन्नाथपुरी है। यह भी कहा जाता है कि चारों धाम के नाथ श्रीश्रीजगन्नाथ जी ही है, वे बदरीनाथ में स्नान करते हैं, द्वारका में शृंगार करते हैं और पुरी में ५६ प्रकार के भोग को ग्रहणकर रामेश्वरनाथ में जाकर विश्राम करते हैं। भारत के चार वेद – ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के आधार पर ही आदिशंकराचार्य जी ने भारत के चार पीठों का निर्माण किया था।

पुरी जगन्नाथ मंदिर का निर्माण गंग-वंश के प्रतापी राजा चोलगंगदेव ने १२वीं शताब्दी में किया था। इस मन्दिर की ऊँचाई २१४ फीट और ८ इंच है। यह जगन्नाथ मन्दिर ओड़िशा का सबसे ऊँचा जगन्नाथ मन्दिर है, जो यहाँ के स्थापत्य एवं वास्तुकला का बेजोड़ उदाहरण है। यह पंचरथ आकार का है। इसे श्रीमन्दिर कहते हैं, जिसके चार महाद्वार हैं। पूर्व दिशा का सिंहद्वार धर्म का प्रतीक है। उत्तर दिशा का महाद्वार हस्ती द्वार है, जो ऐश्वर्य का प्रतीक है। पश्चिम दिशा का महाद्वार व्याघ्र द्वार है, जो वैराग्य का प्रतीक है तथा दक्षिण दिशा का महाद्वार अश्व द्वार है, जो ज्ञान का प्रतीक है। सिंहद्वार पर अरुण स्तम्भ है, जो लगभग १० मीटर ऊँचा है, जहाँ से श्रीमन्दिर के रत्न वेदी पर विराजमान जगन्नाथ समेत चतुर्धा विग्रहों के नित्य दर्शन श्रीजगन्नाथ का वाहन अरुण करता है। १३वीं सदी में अरुण स्तम्भ कोणार्क सूर्य मन्दिर में था, जिसे १८वीं सदी में लाकर सिंहद्वार के सामने खड़ा किया गया। प्रतिवर्ष आषाढ़ शुक्ल द्वितीया को भगवान जगन्नाथ की विश्व प्रसिद्ध रथयात्रा अनुष्ठित होती है। प्रतिवर्ष तीन नए रथों का निर्माण अक्षय तृतीया से आरम्भ होता है। रथ निर्माण की अत्यन्त गौरवशाली परम्परा रही है, जिसके अन्तर्गत वंशानुक्रम से रथ-निर्माण का कार्य सुनिश्चित बढ़ईगण ही करते हैं। नंदिघोष (जगन्नाथजी का रथ), तालध्वज रथ (बलभद्रजी का रथ) तथा देवी सुभद्रा जी के रथ देवदलन के निर्माण में कुल लगभग २०५ प्रकार के सेवायतगण सहयोग देते हैं। रथ-निर्माण कार्य में लगभग

शेष भाग पृष्ठ २८४ पर

जप और ध्यान

स्वामी ब्रह्मेशानन्द

रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, वाराणसी

प्रश्न : कहा जाता है कि ईश्वर के नाम में शक्ति है और यह मन को शुद्ध करने वाला है। मैं कैसे इस पर विश्वास करूँ?

उत्तर : युद्ध या रुपये जैसा कोई भी एक शब्द लो और छह महीने तक उसका जप करो और स्वयं ही इसका प्रभाव पता चल जायेगा।

प्रश्न : तो क्या मेरा मन रुपये या युद्ध के विषय में सोचने लगेगा?

उत्तर : इससे भी अधिक होगा। जैसे-जैसे तुम पैसे के विषय में अधिकाधिक सोचने लगोगे, तुम्हारा अवचेतन मन इसको प्राप्त करने के उपाय सोचने लगेगा। इसके अतिरिक्त टैक्स और चोरी होने जैसी समस्या उत्पन्न होगी। यदि तुम युद्ध को सोचने लगोगे, तो छह महीने बाद शायद तुम दूसरों से झगड़ने लगो। इसी तरह यदि तुम कोई पवित्र नाम जप करो, तो धीरे-धीरे यह तुम्हारे अवचेतन मन को प्रभावित करेगा और तुम निर्मल हो जाओगे।

प्रश्न : लेकिन हम देखते हैं कि बहुत-से लोग ईश्वर का नाम लेते हैं, लेकिन फिर भी अपवित्र जीवन जीते हैं।

उत्तर : ऐसे लोग ईश्वर-नाम मशीन की तरह लेते हैं। इसको लेने के लिये दिशा-निर्देश और नियमों का वे पालन नहीं करते।

प्रश्न : वे दिशा-निर्देश क्या हैं?

उत्तर : नाम का जप भक्तिपूर्वक, मन्त्र के अर्थ सहित और एकाग्र चित्त से करना चाहिए। अच्छा हो कि जप एकान्त में किया जाये।

प्रश्न : हम कैसे निश्चय करें कि कौन से 'नाम' का जप करना चाहिए, क्योंकि बहुत-से नाम हैं। किस पर विश्वास करें?

उत्तर : इसे उपयुक्त गुरु पर छोड़ देना चाहिए। गुरु के अभाव में अपनी रुचि के अनुसार किसी भी एक नाम का चयन कर सकते हैं। समय आने पर ईश्वर की कृपा से यह समस्या दूर हो जायेगी।

प्रश्न : कुछ लोग ध्यानाभ्यास के समय मन्त्र-जप करते हैं। क्या यह ठीक है?

उत्तर : मन्त्र, मूर्तियों की तरह ही परमसत्ता के शब्द प्रतीक हैं। अत: कोई भी मन्त्र-जप के साथ-साथ उसके अर्थ का चिन्तन कर सकता है। ध्यानाभ्यास के साथ जप एक सर्व-स्वीकृत साधन पद्धति है। यदि कोई मन्त्र के अर्थ का चिन्तन करे, तो यह ध्यान ही है। जप ध्यान में परिणत हो जाता है। बिना अर्थ-चिन्तन के जप करना केवल दोहराने जैसा है और इसे ध्यान नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न : जब मैं जप करता हूँ, तो ध्यान नहीं होता और जब ध्यान करने बैठता हूँ, तो जप नहीं होता, मैं क्या करूँ?

उत्तर : आरम्भ में जप और ध्यान पृथक रूप से किया करे, हालाँकि जप बाद में ध्यान में परिणत हो जाता है। जप एक प्रकार का विछिन्न ध्यान है, जबकि ध्यान ईश्वर पर अनवरत, अविछिन्न चिन्तन-धारा है। पतंजलि कहते हैं कि हमें ईश्वर का नाम उसके अर्थ-चिन्तन के साथ-साथ लेना

चाहिए। इसीलिए पतंजलि निर्देशित जप-पद्धति ध्यान तुल्य ही है, लेकिन यदि तुम उसे करने में असमर्थ हो, तो जैसा मैंने पहले कहा, जप और ध्यान अलग-अलग करना चाहिए।

प्रश्न : क्या ध्यान में प्रवेश के साथ मन्त्र-जप बंद हो जाता है? क्या यह अच्छा संकेत है?

उत्तर : हाँ, मन्त्र-जप परिपक्व होने पर ध्यान में परिणत हो जाता है। परन्तु हमें सावधान रहना चाहिए कि कहीं जप बन्द होने पर मन व्यर्थ में इधर-उधर न भटके। गहन एकाग्रता के साथ इष्ट का चिन्तन करते हुए जप करना चाहिए। जब इष्ट में ध्यान स्थिर हो जाता है, तो जप बन्द हो जाता है। इस क्षण हमें सावधान रहना चाहिए कि कहीं मन अचानक जड़ता में लय न हो जाये या फिर चंचल होकर इधर-उधर न भटकने लग जाये।

एकाग्रता

प्रश्न : एकाग्रता कैसे प्राप्त की जा सकती है? बहुत बार जब मैं पढ़ाई करता हूँ या फिर कोई भाषण सुन रहा होता हूँ, तो १०-२० मिनट के बाद मुझे लगता है कि मेरा ध्यान भटक गया है। मुझे क्या करना चाहिए?

उत्तर : सर्वप्रथम उन सभी क्रिया-कलापों को त्याग दो, जो तुम्हारी एकाग्रता को नष्ट करते हैं। बहुत समय तक टीवी, मोबाइल देखना उन आदतों में से एक है।

सब समय सचेत रहो। जो कुछ भी करो पूरी एकाग्रता के साथ करो, चाहे वे झाड़ू देने और कपड़े धोने जैसे अति साधारण काम ही क्यों न हों। एकाग्रता को एक आदत बना लो। पढ़ाई करते समय पढ़ने के साथ-साथ लाइन पर अँगुली रख सकते हो। यदि तुम अकेले हो, तो जोर से भी पढ़ सकते हो, इससे तुम्हें एकाग्रता में अतिरिक्त सहायता मिल सकती है। इसका तात्पर्य यह है कि हम मन के साथ अपने हाथ, आँख, कान और वाणी को भी जोड़ रहे हैं। इन्द्रियों को मन के साथ संयुक्त करने से मन को लक्ष्य पर स्थिर करना आसान हो जाता है। भाषण सुनते समय नोट्स बनाना चाहिए। ऐसा करने से पूरे भाषण के दौरान मन अधिक स्थिर रहेगा।

प्रश्न : एकाग्रता और ध्यान में क्या अन्तर है?

उत्तर : एकाग्रता किसी के भी द्वारा किसी भी विषय या वस्तु (बाहरी या भीतरी) पर की जा सकती है। कोई फिल्म देखकर, मधुर संगीत सुनकर, पुस्तक पढ़कर या भाषण सुनकर भी मन एकाग्रचित्त हो सकता है। एक विद्यार्थी अपनी पाठ्यपुस्तक पढ़कर एकाग्र हो सकता है। एक संगीतज्ञ भी जब तक एकाग्रचित्त न हो, तब तक वह अच्छा संगीत नहीं प्रदर्शन कर सकता। यहाँ तक कि एक शिशु भी अपनी रुचि की चीज पाकर एकाग्र हो जाता है। अपने शिशु के पालन में माँ एकाग्रता प्राप्त करती है। यहाँ तक कि दुष्ट व्यक्ति भी अपराधों में एकाग्रचित्त होते हैं।

किसी आदर्श वस्तु या विचार या विग्रह अथवा शब्द पर एकाग्रता को ध्यान कहते हैं। द्वितीयतः इसको बिना किसी बाहरी वस्तु की सहायता से किया जा सकता है। साधारणतः इसको शरीर के किसी भी उच्च चेतना के केन्द्र, जैसे हृदय या भृकुटी या सहस्रार (मस्तिष्क) में किया जाता है, लेकिन आध्यात्मिक ध्यान इतना आसान नहीं है और बहुत प्रयास-साध्य है।

प्रश्न : चिन्तन किसे कहते हैं?

उत्तर : किसी भी वस्तु या लक्ष्य पर गहन विचार ही चिन्तन कहलाता है।

प्रश्न : इच्छा शक्ति या मन की शक्ति को कैसे बढ़ाया जा सकता है?

उत्तर : कई उपायों से मन की शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। संयमित जीवन जीना, अच्छी आदतें बनाना, कोई बड़ा या कठिन काम हाथ में लेना और इसको पूरा करना आदि कुछ उपाय हैं।

ध्यान में सफल होने की शर्तें

प्रश्न : कब और क्यों ध्यान अभीष्ट लक्ष्य को पाने में सफल नहीं होता?

उत्तर : ध्यान बिना प्रस्तुति या पूर्व तैयारी के सफल नहीं हो सकता। ध्यान पतञ्जलि द्वारा निर्देशित अष्टांग योग में सातवाँ चरण है। इसका अर्थ है कि ठीक-ठीक ध्यान योग की सर्वोच्च उपलब्धि अर्थात् समाधि का ठीक पूर्ववर्ती सोपान है। पहले पाँच चरण बहिरंग योग कहलाते हैं और वे योग की आरम्भिक प्रस्तुति हैं। बिना इसके अभ्यास और इसमें कुछ हद तक प्रतिष्ठित हुए बिना कोई भी अच्छे ध्यान का अधिकारी नहीं बन सकता। ये चरण हैं –

प्रथम – पाँच यम (नैतिक मूल्य) – अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अस्तेय (चोरी न करना) और अपरिग्रह (संचय न करना)।

द्वितीय – पाँच नियम (करणीय अनुष्ठान) – शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान।

तृतीय – (स्थिर) आसन।

चतुर्थ – प्राणायाम या श्वास पर नियंत्रण ।

पंचम – प्रत्याहार अर्थात् मन को विषयों से हटाना।

षष्ठ – धारणा अर्थात् मन को लक्ष्य में स्थिर करने का प्रयास।

सप्तम – ध्यान।

अष्टम – समाधि।

प्रश्न : कुछ लोग कहते हैं कि ध्यान के लिए सर्वोत्तम समय ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदय से दो घंटा पहले) है। क्या यह सही है?

उत्तर : हाँ, इस समय प्रकृति शान्त रहती है और मनुष्य भी सोये रहते हैं। वातावरण भी निश्चंचल रहता है। अत: इस समय ध्यान करना अच्छा है।

प्रश्न : ध्यान के समय किस दिशा की ओर मुँह करना चाहिए?

उत्तर : हिन्दू लोग पूर्व दिशा की ओर मुँह करके ध्यान करते हैं, जबकि मुस्लिम मक्का की ओर मुँह करके उपासना करते हैं। लेकिन यह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं है। कोई भी इष्ट-देवता के चित्र या मूर्ति की ओर मुँह करके ध्यान कर सकता है, चाहे वह किसी भी दिशा में हो।

प्रश्न : आरम्भ में कितने समय ध्यान करना चाहिए?

उत्तर : सुबह और शाम १५ मिनट से लेकर आधा घंटा तक कर सकते हो। धीरे-धीरे इसे बढ़ाना चाहिए।

प्रश्न : यदि किसी के पास संध्या को ध्यान के लिए समय उपलब्ध न हो, तो किस समय ध्यान करना चाहिए?

उत्तर : किसी और समय कर सकते हो। संध्या को समय उपलब्ध न हो, तो रात में कर सकते हो। लोग दिन में भी करते हैं। इसके अतिरिक्त, पन्द्रह-पन्द्रह मिनट के लिए कई बार ध्यान के लिए बैठा जा सकता है। यह अनौपचारिक भले ही हो, लेकिन हमारे निश्चित समय के ध्यान की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायक होता है।

प्रश्न : मन को वश में करने के लिए साधारण लोगों के लिए न्यूनतम क्या समय है?

उत्तर : मन के निग्रह का कोई निश्चित समय नहीं है। यह साधना की तीव्रता पर निर्भर करता है। श्रीरामकृष्ण के अनुसार कोई लक्ष्य को तीन दिन के भीतर भी प्राप्त कर सकता है और किसी को तीन साल, यहाँ तक कि तीन जन्म या उससे भी अधिक लग सकते हैं। याद रखें, मन का निग्रह सबसे कठिन काम है। इसकी तुलना समुद्र को तिनके से खाली करने से की गयी है। लेकिन इससे क्या है? अभ्यास करते रहना चाहिए, लक्ष्य प्राप्त होगा ही।

ध्यान का उद्देश्य

ध्यान के बहुत उद्देश्य हो सकते हैं। इसका उपयोग एकाग्रता बढ़ाने के लिए हो सकता है। विद्यार्थियों के लिए तो ध्यान बहुत उपयोगी है। यदि वे इसे नियमित रूप से करें, तो निश्चित रूप से उनकी एकाग्रता, स्मृतिशक्ति और ग्रहणशीलता बढ़ेगी। कुछ लोग जीवन में मूल्यों को उतारने के लिए भी ध्यान करते हैं। ध्यान के विषय के अनुसार हम कई प्रकार के मूल्यों को जीवन में उतार सकते हैं। ध्यान चरित्र-निर्माण का एक शक्तिशाली उपाय है।

योगी ध्यान का अभ्यास, समाधि और चित्तवृत्तियों का पूर्ण निरोध मोक्ष के लिए करते हैं।

ध्यान का किंचित् अभ्यास हमें तनाव कम कर मानसिक शान्ति प्रदान करने में भी सहायक होता है। लेकिन, एकाग्रचित्त होकर ध्यानाभ्यास कुछ लोगों के लिए, खासकर जो इसके अभ्यस्त नहीं हैं, तनावपूर्ण हो सकता है। इसीलिए आरम्भ में सचेतनता पर ही जोर देना चाहिए।

प्रश्न : क्या ध्यान हमें हमारे आध्यात्मिक लक्ष्य के अलावा अन्य लक्ष्यों की प्राप्ति में भी सहायक हो सकता है?

उत्तर : अवश्य। ध्यान से एकाग्रता बढ़ती है, जो जागतिक लक्ष्य पाने में सहायक सिद्ध होती है, लेकिन इस गरिमामय पद्धति का यह बहुत तुच्छ उपयोग होगा, उसका अवमूल्यन होगा।

प्रश्न : क्या ध्यान भय को दूर करने में सहायक हो सकता है?

उत्तर : हाँ। ध्यान का अर्थ ही है प्रगाढ़ चिन्तन। हम जो सोचते हैं, कालान्तर में वही हो जाते हैं। यदि कोई निर्भीक व्यक्तित्त्व जैसे बुद्ध या स्वामी विवेकानन्द का ध्यान करे, तो वह अवश्य ही निर्भीक होगा। स्वामी विवेकानन्द सिंह के हृदय का ध्यान करने को कहते हैं। पतंजलि अपने योगसूत्र में किसी पवित्र और अनासक्त आत्मा के हृदय का

ध्यान करने का परामर्श देते हैं (वीतरागविषयं वा चित्तम्)।

प्रश्न : क्या ध्यान रजोगुण और तमोगुण को घटाकर सत्त्वगुण बढ़ाता है?

उत्तर : सत्त्वगुणी मनुष्य ही यथार्थ ध्यान कर सकता है। तमोगुणी व्यक्ति ध्यान में बैठने पर सो जायेगा। रजोगुणी भी बहुत समय तक ध्यान के लिए एकासन में नहीं बैठ पायेगा। तमोगुण दूर करने के लिए व्यक्ति को शारीरिक या मानसिक कार्य करने चाहिए। रजोगुणी को अपनी उपरोक्त क्रियाएँ धीरे-धीरे कम करनी चाहिए। एक प्रकार से ध्यान भी रजोगुण को कम करने में सहायक हो सकता है।

प्रश्न : क्या कोई ध्यान के द्वारा नकारात्मक विचारों से छुटकारा पा सकता है?

उत्तर : नकारात्मक विचारों से आपका क्या तात्पर्य है? 'मैं असहाय हूँ', 'मैं दुर्बल हूँ', 'मैं कुछ नहीं कर सकता', सभी लोग खराब हैं आदि विचार ही आमतौर पर नकारात्मक विचार कहे जाते हैं। युद्ध-भूमि में अर्जुन भी इसी प्रकार की सोच के प्रभाव में आ गया था। इस प्रकार के विचारों को दूर करने के लिए विरुद्ध विचारप्रवाह मन में उठाना चाहिए। लेकिन स्मरण रहे, इसको हम ध्यान नहीं कह सकते।

प्रश्न : आपने कहा कि ध्यान (बिना नैतिक मूल्यों के) हमें शक्तिशाली, लेकिन अधिक बुरा बना सकता है। कैसे?

उत्तर : जैसा कि पहले ही कहा है, ध्यान अर्थात प्रगाढ़ चिन्तन। ध्यान से हमारी शक्ति बढ़ जाती है और इस शक्ति को अच्छे या बुरे कामों में प्रयोग किया जा सकता है। यदि हमारा मन काम, क्रोध, लोभ आदि नीच प्रवृत्तियों से भरा है, तो ये प्रवृत्तियाँ और अधिक शक्तिशाली होंगी। रावण, बाणासुर आदि बड़े योगी थे और रोज ध्यान किया करते थे। उन्होंने ध्यान के द्वारा लब्ध शक्ति का उपयोग स्वार्थ और दूसरों को हानि पहुँचाने के लिए किया। इसलिए ध्यानाभ्यास के साथ-साथ सत्य, अहिंसा, इन्द्रिय-संयम, अपरिग्रह, अस्तेय आदि गुणों का अभ्यास भी करना चाहिए।

प्रश्न : इच्छाओं का दमन क्या जीवन का अन्त नहीं है? ध्यान की इच्छा भी तो आखिर एक इच्छा ही है? कुछ सिद्ध साधक कहते हैं कि इस अवस्था में एक नशा-सा होता है।

उत्तर : इच्छाओं का अन्त मुत्यु नहीं है। जिसकी इच्छाएँ नहीं हैं, वह मरता नहीं है। वास्तव में कामनाशून्यता ही जीवन का लक्ष्य है। ऐसी अवस्था एक संतोष और आनन्द को जन्म देती है। यह साधारण शराब की मत्तता नहीं है, लेकिन ऐसा व्यक्ति दिव्य आनन्द में अवश्य मस्त रहता है। ध्यान कुछ इच्छाओं की पूर्ति का माध्यम भी है। लेकिन जब यह वासनाशून्यता की अवस्था आती है, तो ध्यान का उद्देश्य पूरा हो जाता है। निर्वासन – व्यक्ति के लिए जीवन ही ध्यान स्वरूप हो जाता है।

प्रश्न : योग और ध्यान से विश्रान्ति आती है, ऐसा कहा जाता है। इनका आध्यात्मिक जीवन से क्या सम्बन्ध है।

उत्तर : यह दुर्भाग्य है कि आजकल योग और ध्यान ईश्वर-प्राप्ति के लिए नहीं; बल्कि केवल एकाग्रता और मन की शान्ति के लिए किया जा रहा है। लेकिन सनातन धर्म में ये ईश्वर-प्राप्ति और आध्यात्मिक विकास के मुख्य साधन समझे जाते हैं। मन की शान्ति तथा एकाग्रता इसके सह-उत्पाद हैं।

आध्यात्मिक जीवन या ईश्वर-केन्द्रित जीवन का अर्थ है –

(अ) जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक होना।

(आ) ईश्वर या आत्मा ही परम सत्य है, इनके अस्तित्त्व में दृढ़ विश्वास होना। इनकी सत्ता जड़ पदार्थों से भी अधिक है, यह मानना।

(इ) स्वयं को केवल देह-मन-युक्त एक सत्ता न समझकर आध्यात्मिक सत्ता समझना।

(ई) आध्यात्मिक लक्ष्य के लिए एक निश्चित पथ का अनुसरण करना। योग आत्मसाक्षात्कार या ईश्वरप्राप्ति के लिए ध्यान का एक शक्तिशाली उपाय के रूप में निर्देश करता है। **(क्रमशः)**

ठाकुर के आश्रय में जब आ गये हो, तो उनकी कृपा अवश्य ही पायी है, ऐसा जानना। उनकी कृपा का सदुपयोग करो। कृपामय की कृपा पाकर यदि धारणा न कर सको, आनन्द न पा सको, जीवन-मरण का रहस्य भेदकर उनके नित्य साथी न हो सको, तो फिर तुम्हारे जैसा अभागा इस दुनिया में और कौन है? इस युग के लोग हो तुम सब, युग की हवा शरीर से लगी है, उसका लाभ लेना मत छोड़ना। अन्य किसी भी युग में किसी ने इतने सीधे और सहज ढंग से राह नहीं दिखायी, यह सुविधा यदि यों ही गँवा दोगे, तो फिर बहुत समय तक पछताना पड़ेगा।

– स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज

महान पत्थर का मुख

नथानियल हॉथोर्न

(एक अमेरिकी लेखक नथानियल हॉथोर्न द्वारा लिखित 'द ग्रेट स्टोन फेस' नामक प्रसिद्ध कहानी का बांगला अनुवाद पूज्यपाद स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज ने किया जो लोकप्रिय हुआ। विवेका-ज्योति के लिए इसका हिन्दी अनुवाद रायपुर के डॉ. विप्लव दत्ता ने किया है। – सं.)

(गतांक से आगे)

अर्नेस्ट ने मन ही मन निश्चित किया कि राष्ट्रनायक को स्वयं अपनी आँखों से देखे बिना वह इस बात को नहीं मानेगा। इस शोभायात्रा में उड़ती अत्यधिक धूल से दूर के उस पत्थर का मुख धुँधला-सा दिख रहा था। इसी समय शोभायात्रा धीरे-धीरे थम गयी। सभी राष्ट्रनायक को एक झलक देखने के लिए अधीर और उत्सुक होकर सुसज्जित घोड़ागाड़ी की ओर देख रहे थे। राष्ट्रनायक के खिड़की से झाँकते ही सभी उत्साह से तालियाँ बजाने लगे और अपनी-अपनी टोपियाँ निकालकर ऊपर उछालते हुये उनका अभिनन्दन करने लगे। अर्नेस्ट इसी पल की प्रतीक्षा कर रहा था। उसने सचमुच देखा कि इस राष्ट्रनायक के मुख और उस पत्थर के मुख में आश्चर्जनक रूप से समानता है। परन्तु महान पत्थर के मुख पर जो प्रशान्ति का भाव तथा स्वर्गीय हँसी थी, जो अर्नेस्ट को सदैव प्रेरणा देती थी, वह इस राष्ट्रनायक के मुख पर नहीं थी।

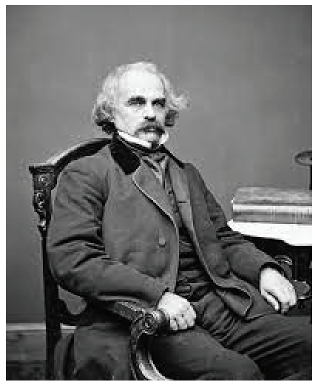

नथानियल हॉथोर्न

वह पड़ोसी फिर जोर से बोल उठा – 'स्वीकार करो अर्नेस्ट, वह भविष्यवाणी सफल हुई। इस राष्ट्रनायक के मुख और उस महान पत्थर के मुख में अद्‌भुत सादृश्य है !'

अर्नेस्ट ने उत्तेजित होकर उत्तर दिया ''नहीं, मैं इनके साथ उस महान पत्थर के मुख की कोई समानता नहीं देख पा रहा हूँ।'' उसके पड़ोसी ने भी उत्तेजित होकर उत्तर दिया, तब तो इस महान पत्थर का मुख किसी से मिलेगा ही नहीं। यह बात सुनकर अर्नेस्ट दुखित हो गया। वह समझा नहीं पा रहा था कि इसका क्या उत्तर दें। वह निराश और अत्यन्त दुखित हो गया। उस घाटी के सभी लोग उस राष्ट्रनायक के मुख के साथ उस महान पत्थर के मुख की समानता बताने में उन्मत्त थे, किन्तु अर्नेस्ट का दृढ़ विश्वास था कि उस महान पत्थर के मुख के साथ इनका कोई मेल नहीं हो सकता। इसी समय मानो अर्नेस्ट के कानों में कोई कह रहा हो ''दुखी मत होओ अर्नेस्ट, प्रतीक्षा करो, वह अवश्य आयेगा, जिसका मुख उस महान पत्थर के मुख जैसा होगा।''

उस पहाड़ी क्षेत्र में वर्षों बीत गये। हमारा वह छोटा अर्नेस्ट अब वृद्ध हो गया है। उसके हाथों में छड़ी, सफेद बाल एवं मुख पर वृद्धावस्था की लकीरें हैं। दूर से उसका चेहरा किसी प्राचीन वयोवृद्ध ऋषि जैसा लगता है, परन्तु आज हमारा अर्नेस्ट एक प्रसिद्ध व्यक्ति है। आज उसका नाम केवल उस पहाड़ी क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है। आज उस शहर के बड़े-बड़े विद्वान, अध्यापक, राजनेता भी उसकी सहज सरल भाषा में धर्म के उच्च तत्त्वों को सुनने के लिये इस घाटी में आते हैं। अर्नेस्ट के मुख की वह अलौकिक हँसी, सबके लिये समान आन्तरिकता, सबके लिये समान प्रेम देखकर लोग मुग्ध और आनन्दित होते हैं और मन में अपार संतोष लेकर वापस जाते हैं। परन्तु ये सभी लोग जब उस महान पत्थर के मुख के सामने खड़े होते हैं, तब वे यह समझ नहीं पाते कि यह मुख उन्होंने और कहाँ देखा है।

ऐसे समय एक संवाद से अर्नेस्ट के शान्त एवं गहरे जीवन में एक लहर-सी उठती है। एक कवि जिन्होंने पराक्रमशाली योद्धा एवं राष्ट्रनायक गैदरगोल्ड जैसा ही इस पहाड़ी क्षेत्र में जन्म ग्रहण किया था और उनके ही जैसे बाद में शहर में रहने लगे थे, वे वापस आ रहे हैं। इस कवि के वापस आने की सूचना से इस अंचल के लोगों में उतनी हलचल नहीं मचती, क्योंकि वे पहले के लोगों जैसा उतना प्रभावशाली या असाधारण व्यक्तित्व के धनी नहीं थे। परन्तु ये बहुत छोटे भी नहीं थे। क्योंकि जब वे अपनी लेखनी से प्रकृति का कोई वर्णन करते, तब ऐसा लगता कि स्वर्ग से देवताओं ने एक सुन्दर फूलों की माला बनाकर प्रकृति में

चारों ओर बिखेर दिया है। उनकी लेखनी से नि:सृत उच्च कोटि के काव्य अत्यन्त सहज सुन्दर ढंग से साधारण मनुष्यों को प्रेरित करते। अर्नेस्ट ने उनकी रचनाओं में उस कवि के लिखे गीत एवं कविताओं को पढ़ा, इसलिए अर्नेस्ट के मन में यह विश्वास था कि इस महान पत्थर के मुख के सदृश इस कवि का मुख अवश्य होगा। कवि ने अपने प्रारम्भिक जीवन में कविता लिखने की प्रेरणा इस पत्थर के मुख से ही पायी थी, इसलिए इतने वर्षों के बाद वे इस पहाड़ी क्षेत्र में वापस आ रहे हैं।

एक दिन शाम को अर्नेस्ट अपनी कुटिया के सामने बैठकर पुस्तक पढ़ रहे थे, तब उन्होंने देखा कि गैदरगोल्ड की पुरानी हवेली, जो अब होटल के रूप में है, उसके सामने एक गाड़ी आकर रूकी एवं उस गाड़ी से एक सज्जन उतरकर इधर-इधर देख रहे हैं, अर्नेस्ट समझ गया ये इस क्षेत्र में नये आये हैं। अर्नेस्ट धीरे-धीरे अपनी छड़ी के सहारे आगे बढ़ता है। परन्तु ये कवि अर्नेस्ट के नाम से पूर्व परिचित नहीं हैं। उन्होंने आर्नेस्ट को पूछा, इस घाटी में मेरे रहने की क्या कोई व्यवस्था हो सकती है?

अर्नेस्ट ने मुस्कुराते हुये कहा – अवश्य ही।

होटल के सामने एक बेंच पर बैठते हुए अर्नेस्ट ने उस आगन्तुक से कहा – आपको तो मैं नहीं पहचान पा रहा हूँ, क्या आप यहाँ नये आये हैं?

कवि ने अर्नेस्ट के हाथ की पुस्तक की ओर दिखाकर कहा – यह पुस्तक मैंने लिखी है। यह सुनकर अर्नेस्ट और अधिक ध्यान से कवि को देखने लगा। कुछ देर उन्हें देखकर फिर दूर स्थित उस महान पत्थर के मुख की ओर देखता है। फिर धीरे-धीरे दुखी होकर अपना सिर हिलाने लगता है। अर्नेस्ट को ऐसा करते देखकर कवि ने उससे पूछा, क्या हुआ? आप उदास क्यों हो गये? अर्नेस्ट ने उत्तर दिया – मैं आजीवन भविष्यवाणी के पूर्ण होने की प्रतीक्षा करता रहा। जब आपकी ये कवितायें पढ़ीं, तब मैंने आशा की कि इस महान पत्थर का मुख आपके मुख से मिलेगा। परन्तु यह देखकर दुखी हूँ कि आपके मुख के साथ उस मुख की कोई समानता नहीं है।

यह सुनकर कवि आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने पूछा कि आपको क्यों लगा कि मेरा मुख उस पत्थर के मुख जैसा होगा? अर्नेस्ट ने उत्तर दिया – बहुत परिश्रम से मैंने पढ़ना-लिखना सीखा है। मैं बहुत दिनों से आपकी लिखी कविताओं और गीतों को पढ़ रहा हूँ। उनमें निहित उच्च भावनाओं को जन-साधारण को बताता हूँ, मुझे उनका आभास होता रहा है, इसलिए मुझे दृढ़ विश्वास हुआ था कि आपका मुख उस महान पत्थर के मुख से मिलेगा और आप हमलोगों की भविष्यवाणी को सफल करेंगे।

यह सुनकर उस कवि के चेहरे पर भी दुख झलकने लगा। कवि अपना गर्दन हिला कर बोले, आपने ऐसा कैसे सोच लिया? मैं अपनी भावनाओं को कविता के माध्यम से व्यक्त करता हूँ। वास्तव में मेरा जीवन उतना पवित्र नहीं है और न मैंने जीवन में उतनी उत्कर्षता प्राप्त की है। मेरी लेखनी में जो प्रकाशित हुआ है, वह मेरा कवित्व है, व्यक्तित्व नहीं है, मैंने आजीवन इसके विपरीत आचरण किया है। इसलिए मेरे मुख के साथ उस मुख का मेल नहीं होना स्वाभाविक है।

यह सुनकर अर्नेस्ट धीरे-धीरे उठकर खड़ा हो जाता है एवं एक हाथ में छड़ी और एक हाथ में पुस्तक लेकर अपनी कुटिया की ओर लौटने लगता है। हमारे कवि भी अर्नेस्ट के साथ चलने लगते हैं। अर्नेस्ट की कुटिया में बहुत-से लोग अर्नेस्ट का उपदेश सुनने के लिये अधीर होकर प्रतीक्षा कर रहे हैं। कवि भी उनके साथ ही बैठ जाते हैं।

सूर्य की अस्त होते प्रकाश में कवि के सामने एक सत्य प्रकाशित हो जाता है। वे जोर से बोल उठते हैं – देखिए, आप सभी देखिए, उस महान पत्थर के मुख के साथ अर्नेस्ट के मुख की अद्‌भुत समानता है। कवि के इस उत्तेजनापूर्ण कथन से सभी अर्नेस्ट के मुख की ओर देखते हैं एवं दूर उस महान पत्थर के मुख की ओर देखते हैं और आश्चर्यचकित होकर सभी एक ही बात कहते हैं। अर्नेस्ट उनकी कही सभी बातें सुन नहीं पाता और अपनी उपदेश-वाणी को बन्दकर छड़ी लेकर खड़ा हो जाता है और धीरे-धीरे अपने छोटे-से घर की ओर वापस जाने लगता है। वह भविष्यवाणी के सफल होने के लिए उस व्यक्ति की प्रतीक्षा करेंगे, जिसके साथ उस महान पत्थर की मूर्ति का मुख मिलता-जुलता है।

हमें लगता है कि स्वामी विवेकानन्द का यह कथन – 'Religion is being and becoming' अर्थात् होना एवं हो जाना ही धर्म है। इस भावना को कथाकार नथानियल हॉथोर्न ने कहानी में अद्भुत रूप से व्यक्त किया है। ○○○

रामगीता (४/ २)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार हैं। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज हैं। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन श्रीराम संगीत महाविद्यालय, रायपुर के सेवानिवृत्त प्राध्यापक श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द ने किया है। – सं.)

श्रीरामचरित मानस में उसे एक समन्वय और एक नये रूप में और गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने दोनों को एक दूसरे रूप में प्रस्तुत किया और रामायण में भुशुण्डिजी ने एक दूसरे रूप में। लगता तो यह है कि दोनों में भिन्नता है, पर गहराई से विचार करके देखें, तो उन दोनों में भिन्नता नहीं है। भगवान कृष्ण ने यह कहा कि मनुष्य के लिए ज्ञान वेदान्त अथवा निर्गुण-निराकार ब्रह्म को समझ पाना, ग्रहण कर पाना इसलिए कठिन है कि –

अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।। गीता १२/५

जो शरीर में स्थित है, शरीर ही उसके सारे जीवन का केन्द्र है, उसके लिये जो निराकार है, अव्यक्त है, उसको समझ पाना, उसमें स्थित हो पाना, स्वाभाविक है कि उसके लिए कठिन है। इसलिए सर्वश्रेष्ठ यही होगा कि वह ईश्वर को सगुण साकार रूप में स्वीकार करे और संसार में जैसे रूप हैं, वैसे ही भगवान परम सुन्दर हैं और उनमें दिव्य गुण हैं। कागभुशुण्डिजी से जब गरुड़ ने पूछा कि निर्गुण और सगुण में सरल और कठिन कौन है, तो उनका उत्तर लगता है कि भगवान कृष्ण के उत्तर से भिन्न है। उन्होंने कहा –

निर्गुण रूप सुलभ अति सगुण जान नहिं कोइ।

निर्गुण रूप तो बहुत सुलभ है। यह बात बिलकुल तर्कसंगत है। जब वह सर्वत्र विद्यमान है, तो उसे पाने का कोई प्रश्न नहीं है। जो वस्तु दुर्लभ होती है, कहीं दूर होती है, तो उसे पाने के लिये हम प्रयत्नशील होते हैं, वहाँ की यात्रा करते हैं, पर जो अपने आप में ही विद्यमान है, उससे बढ़कर सुलभ और कौन होगा? निर्गुण में स्थिति अत्यन्त कठिन है, यह एक पक्ष है और निर्गुण अत्यन्त सुलभ है, क्योंकि वह सब में प्राप्त है। यह दूसरा पक्ष है। अब उसका कारण बताते हैं। गरुड़जी कहते हैं, महाराज निर्गुण में तो कठिनाई हो सकती है, सगुण में क्या कठिनाई है? अब उस दोहे को एक बार फिर पढ़िये। जिसको आप शायद पढ़ते भी न हों और शायद उसके अर्थ को आप सुनना उतना पसन्द न करते हों। मैं श्रोताओं से यह कह देना चाहता हूँ कि मैं वह नहीं सुनाऊँगा, जो मैं समझता हूँ। आपको सुनना है, तो वही सुनना होगा, उसे समझना होगा। शब्द है तो बड़ा कठोर, पर बात स्पष्ट है। आपकी रुचि के अनुकूल मैं बोलूँ, आपको हँसी आ जाये, आनन्द आ जाये, इस तरह की मेरी प्रवृत्ति नहीं है।

गोस्वामीजी जो दर्शन यहाँ कह रहे हैं, आपको इस पर ध्यान देना चाहिए। इस पर ध्यान दिये बिना, वैसे आप क्षणिक आनन्द तो ले ही सकते हैं, कौतुक और विनोद तक तो पहुँच सकते हैं, पर प्रमोद, प्रेम तक पहुँचना सम्भव नहीं है। गोस्वामीजी या भुशुण्डिजी एक सूत्र देते हैं कि निर्गुण केवल निर्गुण है, उसमें कोई समस्या नहीं है। पर ईश्वर जब सगुण के रूप में अवतार लेकर आएँगे, तो एक समस्या है कि अगर सगुण बनने के बाद वह सगुण रहे, तो सगुण के साथ जितनी समस्या होगी, वह उसके साथ भी होगी। इसलिए उसके सामने दो बातें एक साथ हैं कि वह सगुण रहते हुए भी निर्गुण रहे। बड़ा कठिन कार्य हो गया। यही दोहे में कहा गया।

निर्गुण रूप सुलभ अति सगुण जान नहिं कोइ।
सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होइ।
७/७३/ख

सुनकर मुनियों के मन में भी भ्रम हो जाता है, जब वह सगुण के रूप में व्यवस्था करता है, व्यवहार के जितने चिह्न हैं, उसमें दृष्टिगोचर होते हैं। इसका अभिप्राय है कि व्यक्ति

का जब किसी काल में जन्म होता है, तो जन्म के साथ मृत्यु अनिवार्य है। जब वह काल की सीमा में होगा, तो वह नश्वर होगा। फिर देश के सन्दर्भ की बात है। जब वह अवतरित होगा, तो एक देश में एक नगर में होगा। उसको देखकर उसकी सर्वव्यापकता खण्डित होती हुई-सी दिखाई देती है। उसकी सर्वव्यापकता कहाँ रही, जब वह एक देश में आ गया। उसके साथ-साथ जब उसमें क्रियाकलाप होंगे, तो मनुष्य जैसा ही होगा। मनुष्य के चरित्र में जैसे कभी हँसता है, कभी रोता है, कभी झगड़ा करता हुआ दिखाई देता है, कभी प्रेम से मिलता हुआ दिखाई देता है। ये सारे दृष्य तो उसमें भी दिखाई देंगे। तो भुशुण्डिजी कहते हैं कि व्यक्ति इन चरित्रों को पढ़ता-सुनता है, तो भ्रमित हो जाता है।

यह आप भगवान राम के सन्दर्भ में और भगवान श्रीकृष्ण के भी सन्दर्भ में पायेंगे। भगवान श्रीकृष्ण का मानवीय चरित्र समझना बहुत कठिन हो जाता है। भगवान राम के चरित्र में विशेषताएँ होते हुए भी वह ईश्वर हैं कि नहीं, लोगों को संशय है? कुछ लोग यह कहते हैं कि वे मनुष्य हैं, महापुरुष हैं। गोस्वामीजी से भी किसी ने कहा होगा। गोस्वामीजी तो बड़ी सरल शब्दावली में कह देते हैं कि अगर वे ईश्वर हैं, तो बहुत अच्छा और अगर वे मनुष्य भी हैं, तो क्या बात है ! उन्होंने कहा –

जौं जगदीस तौ अति भलो जौं महीस तौ भाग।
तुलसी चाहत जनम भरि राम चरण अनुराग।।
दोहावली ९१

अगर वह ईश्वर हैं, तो बहुत अच्छा, और राजा हैं, तो मेरा सौभाग्य है। वे चाहे ईश्वर हों, चाहे मनुष्य हों, मैं चाहता हूँ कि प्रत्येक जन्मों में श्रीराम के चरणों में मेरा प्रेम हो। उनको अगर महापुरुष मानते हैं, तो यह कोई विरोध करने या झगड़ा करने की बात नहीं है। आप अगर उन्हें महापुरुष मानकर उनसे शिक्षा, प्रेरणा ले सकते हैं, तो लीजिए। लेकिन, संकेत यह है और उसको शब्दों में कहें, तो यह कह सकते हैं कि श्रीराम यदि मनुष्य हैं, तो उनका चरित्र अनुकरणीय है। श्रीराम यदि सगुण-साकार रूप में ईश्वर हैं, तो उसके साथ-साथ ध्येय हैं, अर्थात् जिनका ध्यान किया जाता है। भक्त लोग भगवान के रूप का, भगवान के सौन्दर्य का ध्यान करते हैं। भगवान के लिये तीसरा शब्द है कि वे ध्येय हैं। ब्रह्म हैं तो ज्ञेय हैं, सगुण हैं तो ध्येय हैं और मनुष्य हैं, तो अनुकरणीय हैं। यह तो अपनी-अपनी शक्ति पर, क्षमता पर और धारणा पर निर्भर करता है। उसमें विवाद की बात नहीं है। गोस्वामीजी उन तीनों को स्पष्ट करते हैं। जब भी वह प्रश्न होता है, तो व्यक्ति को वे उन तीनों का संकेत देना चाहते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जब वे यह कह देते हैं कि ईश्वर 'वेदान्त वेद्यं विभुम्' 'ज्ञानगम्यं' है, वेदान्त के द्वारा उन्हें जाना जाता है, तो उनका अभिप्राय ज्ञेय की ओर है। ध्येय के लिए तो भगवान राम की सुन्दरता के लिए अनेक चित्र प्रस्तुत किए गये हैं और उसका आनन्द मन्दिर में, चित्र में देख सकते हैं और उसमें रसानुभूति होती है। पर अब गोस्वामीजी की शैली देखिए कि कैसे वे घटनाओं में कुछ सूत्र ऐसे दे देते हैं कि व्यक्ति भ्रमित न हो जाये। उसमें सूत्र क्या है? उन्होंने यह शब्द कहा कि श्रीराम का जन्म रामनवमी को अवध में हुआ। तो वे देश और काल दोनों में आ गए। वे एक नन्हें बालक हैं, तो रूप में भी आ गये। पर जैसे महाभारत में कूट-श्लोक हैं, उसी प्रकार से मानस के कुछ कूट-प्रसंग हैं। जो व्यक्ति सगुण के निर्गुण तत्त्व को समझना चाहता है, लोग दूसरी तरह से उसको ले सकते हैं। गोस्वामीजी ने कहा कि रामनवमी के दिन जन्म हुआ, अवध में बड़ा उत्सव हो रहा है। वह तो ठीक है, बालकों का जन्म होता है और उत्सव मनाते हैं। महाराज दशरथ को पुत्र हुआ है, तो उत्सव मनाना स्वाभाविक है। गोस्वामीजी पढ़नेवाले को, अगर वह तत्त्वग्राही है, तो उसको एक सूत्र दे देते हैं। वह सूत्र क्या है?

मास दिवस कर दिवस भा मरम न जानइ कोइ।
१/१९५/०

अब यह सूत्र क्या हुआ? यह पहेली है। सूर्य तो उदित होगा और अस्त होगा। यह तो व्यक्ति को नित्य ज्ञात है। ज्योतिषी तो भविष्य में भी सूर्योदय कब होगा, सूर्यास्त कब होगा, बता सकता है। लेकिन वे यहाँ एक वाक्य जोड़ देते हैं कि जिस दिन राम का जन्म हुआ, तो एक मास तक सूर्य रुका रह गया और एक मास का दिन हो गया। अब इसको चाहे जिस भाव में ले लीजिए। अगर आप केवल काव्यगत अर्थ लेनेवाले हों, तो इसे आप यों कह सकते हैं कि एक महीने तक इतना आनन्द रहा कि एक महीना एक दिन जैसा लगा। काव्य में ऐसा कह सकते हैं कि जब कोई आनन्द का क्षण हो, तो बहुत समय भी बहुत थोड़ा-सा लगता है। उसे एक भावनात्मक काव्यमयी भाषा मान लीजिए। पर वस्तुत: उसमें संकेत यह है, जो बेचारे साधारण विश्वासी हैं, वे कह देते हैं कि अरे भई, वे तो ईश्वर हैं, वे क्या नहीं कर सकते!

ईश्वर ने चाहा तो एक महीने का दिन हो गया।

पर जो बात गोस्वामीजी कहना चाहते हैं, वह और गहरी है। उसका तात्पर्य क्या है, कृपया आप इसे पूरी तन्मयता से सुनेंगे। इसका अभिप्राय है कि भगवान काल में जन्म लेते हैं, काल में उनके जन्म की प्रतीति होती है। उसको और भी स्पष्ट कर देते हैं गोस्वामीजी। इसका अभिप्राय यह है, जैसा उन्होंने शब्द लिखा, यज्ञ हुआ और यज्ञ के बाद अग्नि देवता खीर लेकर गये। खीर बाँट देने के लिए उन्होंने कहा। खीर बाँटा गया, तो उसके बाद क्या हुआ ।

जा दिन तें हरि गर्भहिं आए। १/१८९/६

कौशल्याजी के गर्भ में राम आए, तो पूछा जा सकता है कि उसके पहले नहीं हो क्या? जब वे सर्वव्यापी हैं, सर्वकाल में हैं, तो क्या गर्भ में उसके पहले नहीं थे, जो आ गये?

इसलिए रामायण में दो शब्द पढ़ने को मिलते हैं। एक शब्द मिलेगा जन्म और दूसरा शब्द मिलेगा प्रगट। ये जन्म और प्रगट दो शब्द हैं। पर इन दोनों शब्दों के भाव में भिन्नता है। जन्म का अर्थ है कि जैसे माता के गर्भ में भ्रूण विकसित होता है और बालक का जन्म होता है। प्रगट शब्द का अर्थ यह होता है कि जो वस्तु अभी तक दिखाई नहीं दे रही थी, वह सामने दिखाई देने लगी। दोनों शब्दों के प्रयोग का तात्पर्य क्या है? व्यवहार के अर्थों में तो जन्म कहेंगे कि राम का जन्म हुआ। लेकिन यदि उस दृष्टि से विचार करें, जिन शब्दावली का गोस्वामीजी प्रयोग करते हैं –

नौमी तिथि मधु मास पुनीता।
सुकल पक्ष अभिजित हरिप्रीता।।
मध्यदिवस अति सीत न घामा।
पावन काल लोक बिश्रामा।।
सीतल मंद सुरभि बह बाऊ।
हरषित सुर संतन मन चाऊ।।
बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा।
स्त्रवहिं सकल सरिताऽमृतधारा।।
सो अवसर बिरंचि जब जाना।
चले सकल सुर साजि बिमाना।। १/१९०/१-५

वहाँ पर शब्द है – राम जन्म सुख मूल। भगवान राम का जन्म चैत्र मास के शुक्ल पक्ष में नौमी तिथि को मध्य दिन में हुआ। तुरन्त ही गोस्वामीजी अगला शब्द बदल देते हैं, कौशल्या अम्बा को क्या लग रहा है? पहले गर्भ में आने का वर्णन किया गया, पर अब कहते हैं – भए प्रगट कृपाला। श्रीराम प्रगट हुए। मानो तात्पर्य यह है कि अपनत्व की अनुभूति के लिए जन्म मानकर व्यक्ति को भावुकता का एक आनन्द आता है। पर वस्तुत: उनका गर्भ में आना और जन्म लेना, उनकी मायाशक्ति के द्वारा होता है। श्रीराम के साथ एक शब्द जोड़ा गया है – 'माया मनुष्यं हरिम्'। माया का अर्थ आप जानते हैं, जो कार्य विधि से हो, वह प्राकृतिक है। प्रकृति का एक नियम है, वह माया नहीं है। जैसे कोई आम का बीज लगावे, तो वह अंकुरित होकर धीरे-धीरे पौधा और कई वर्षों में वृक्ष होगा, तब उसमें आम का फल बढ़ेगा। यह आम का फल माया नहीं है, यह प्राकृतिक नियम का फल है। पर कोई अपनी खाली झोली से अचानक आम का फल निकाल कर दिखा दे और तुरन्त उसकी गुठली से वृक्ष निकल आवे, उसमें फल लग जाये, तब तो वह जादू है। मानो प्रकृति के नियम से जो हुआ, वह तो होता ही है, प्राकृतिक है, पर जो ऐसे हो गया, जैसा होते दिखाई नहीं देता, वह माया है। संकेत यह है कि भगवान मायानाथ हैं। **(क्रमशः)**

कविता

रथ में शोभित जगदीश्वर

आनन्द तिवारी पौराणिक, महासमुंद

दाऊ भईया, बहन सुभद्रा संग छवि अति सुन्दर ।
रथ में शोभित जगदीश्वर ।।
मास आषाढ़, शुक्ल दूज तिथि पावन ।
शीतल मेघ फुहार, ऋतु पावस मन भावन।।
ढोल, मृदंग, शंख ध्वनि गूँजे, कीर्तन नृत्य करें नर-नारी
प्रेमी, भक्त जन रथ खींचत, भीड़ उमड़ पड़ी भारी ।
देव लोक से सुमन बरसै, प्रभु दर्शन दिव्य मनोहर ।
रथ में शोभित जगदीश्वर ।।

पाप, शाप, त्रिताप मिटाओ, हे जग के पालनहार ।
भव-भयहारी, भक्त हितकारी, एक तुम ही आधार ।।
सुखी रहें जगत सब प्राणी, कृपा करो हे नाथ।
सकल सृष्टि संतान तुम्हारी, तुम ही मात और तात ।।
निज चरण कमल रज प्रभु जी, माथ मेरे दो धर ।
रथ में शोभित जगदीश्वर ।।

श्रीरामकृष्ण देव की गंगाभक्ति और गंगा दशहरा

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

बच्चो, जून महीने में हमें गंगा-पूजा करने का अवसर प्राप्त होता है। माँ गंगा के अवतरण-दिवस को हम गंगा दशहरा के नाम से जानते हैं। ज्येष्ठ माह के शुक्ल पक्ष की दशमी को गंगा दशहरा मनाया जाता है। वास्तव में श्रीरामकृष्ण देव को जीवनभर गंगाजी के प्रति विशेष भक्ति करते हुए देखा गया है। वे कहते थे – नित्य शुद्ध ब्रह्म ही जीव को पवित्र करने के लिए वारिरूप में गंगाजी का आकार धारण कर विराजमान है।

स्कन्दपुराण के अनुसार गंगा दशहरा को गंगा या किसी भी पवित्र नदी में स्नान-पूजा करना चाहिए और दान देना चाहिए। माँ गंगा के अवतरण की एक पौराणिक कथा है। प्राचीन काल में एक राजा थे, जिनका नाम सगर था। सगर एक प्रतापी और शक्तिशाली राजा थे। उनकी दो रानियाँ थीं, जिसमें से एक रानी के ६० हजार पुत्र थे व दूसरी को सिर्फ एक पुत्र था। राजा ने अपने राज्य का विस्तार करने के लिए अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। राजा के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को देवताओं के राजा इन्द्र ने चुरा लिया और उसे कपिल मुनि के आश्रम में बाँध दिया। अश्वमेध के घोड़े की तलाश में राजा के ६० हजार पुत्र उसे ढूँढने निकल पड़े। जब उन्होंने घोड़े को मुनि के आश्रम में बँधा देखा, तो वहाँ आक्रमण कर दिया। इसी समय तप में लीन कपिल मुनि की आँखें खुल गईं और वे क्रोधित हो उठे। मुनि की आँखों से ज्वाला निकली और सगर राजा के ६० हजार पुत्र जलकर राख हो गये। राजा के एक और पुत्र अंशुमन को जब इस बात का पता चला, तो वे कपिल मुनि के आश्रम अपने भाइयों की आत्मा की शान्ति के लिए पहुँचे। तब कपिल मुनि ने कहा कि ''जब पवित्र गंगा का जल भस्म हुए पुत्रों पर पड़ेगा, तब उन्हें शान्ति मिलेगी।'' अंशुमन ने बहुत प्रयास किया, परन्तु कपिल मुनि के कोप से उन्हें शान्ति नहीं दिला सके। बाद में उनके पोते राजा भगीरथ ने अपने पूर्वजों की आत्मा की शान्ति के लिए तपस्या करने का बीड़ा उठाया। पूर्वजों का उद्धार करने के लिए भगीरथ ने कठोर तपस्या की और अन्त में माँ गंगा को पृथ्वी पर आने की प्रार्थना स्वीकार करनी पड़ी। अब प्रश्न यह था कि गंगा धरती पर आये कैसे? फिर उन्होंने भगवान शिव की तपस्या कर उनकी जटाओं के माध्यम से धरती पर गंगा को उतारा। तब जाकर राजा सगर के ६० हजार पुत्रों का उद्धार हुआ और उनकी मुक्ति हुई। भगीरथ आगे-आगे चलते रहे और माँ गंगा पीछे-पीछे चलती रहीं। वे गंगा मईया को गंगोत्री से गंगा सागर तक लेकर गये। यहाँ उन्होंने कपिल मुनि से विनती की कि वे उन्हें शाप से मुक्त करें। गंगा की आत्मधारा भगीरथ की कठोर तपस्या का फल है। मोक्षदायिनी गंगा को देखकर कपिल मुनि धन्य हुए और राजा सगर के पुत्रों को अपने शाप से मुक्त किया।

तो बच्चो, इसी प्रकार माँ गंगा का अवतरण स्वर्ग से धरती पर हुआ था। मान्यता है कि गंगा-स्नान से पापों से मुक्ति होती है।

गंगा ने राजा दिलीप से कहा, पापियों के अपार पाप-पंक को मैं कहाँ धोऊँगी? दिलीप ने कहा – हे माता! समस्त विश्व को पवित्र करने वाले विषयत्यागी, शान्तस्वरूप, ब्रह्मनिष्ठ साधु-महात्मा आकर तुम्हारे प्रवाह में स्नान करेंगे, तब उनके अंग के संग से तुम्हारे सारे पाप धुल जायेंगे। क्योंकि उनके हृदय में समस्त पापों का नाश करनेवाले श्रीहरि निवास करते हैं। इस वर्ष २०२५ में प्रयागराज में महाकुम्भ सम्पन्न हुआ, जिसमें अनेक सन्त, महात्मा, संन्यासी, वैरागी, तपस्वी, वैष्णव भक्तों ने श्रद्धापूर्वक स्नान किया।

गंगा का धार्मिक महत्त्व के साथ वैज्ञानिक महत्त्व भी है। वैज्ञानिक मानते हैं कि गंगा के जल में बैक्टिरिया को नष्ट करनेवाले बैक्टिरियोफेज नामक वायरस होता है। तो बच्चो, इस बार हम गंगा दशहरा शास्त्र और वैज्ञानिक तथ्य को ध्यान में रखकर मनायेंगे और उनका आभार प्रकट करेंगे, क्योंकि जल ही जीवन है। ○○○

योग-साधना और ब्रह्मचर्य

सन्तोष

एम.ए.योग (शारीरिक शिक्षा) सी.आर.एस. विश्वविद्यालय, जीन्द, हरियाणा

सभी सुखों को प्राप्त करने के लिए हमें यह जीवन मिला है। जीवन का मुख्य उद्देश्य प्राणों की रक्षा करते हुए मोक्ष को प्राप्त करना है। भारत भूमि ऋषियों-महर्षियों की भूमि रही है, यहाँ पर समय-समय पर योगियों ने साधना द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त किया, जो जीवन का मुख्य उद्देश्य है। योग साधना के लिए ब्रह्मचर्य का बड़ा महत्त्व बताया गया है। योग साधना का अर्थ – कोई भी आध्यात्मिक अभ्यास करना है, जिससे साधक परमात्म-प्राप्ति के अन्तिम लक्ष्य तक पहुँच सके। इसके लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है। उपनिषदों में ब्रह्मचर्य की उत्पत्ति परब्रह्म-योनि विराट पुरुष से मानी गई है, जो सृष्टि का मूल है। योग साधना का पहला कदम ही ब्रह्मचर्य-पालन है। विद्वान पुरुष ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ, दोषों का निराकरण करता हुआ, सद्गुणों द्वारा निरीक्षण करता हुआ मोक्ष को प्राप्त करता है।

भारत भूमि मुनियों-तपस्वियों की भूमि है। यहाँ अनेक योगियों, साधकों ने आत्मज्ञान प्राप्त किया है। साधक को यह जानना आवश्यक है। साधना है क्या? साधना ईश्वर या परमात्मा को प्राप्त करने का साधन है। विभिन्न मतानुसार साधना की प्रक्रियाएँ भिन्न-भिन्न होती हैं, लेकिन लक्ष्य एक ही होता है – परम तत्त्व को प्राप्त करना। साधना के अलग-अलग मार्ग हैं – भक्तियोग, कर्मयोग, ज्ञानयोग, राजयोग, हठयोग आदि। सभी योगों में ब्रह्मचर्य आवश्यक है।

ब्रह्मचर्य – ब्रह्मचर्य का अर्थ है ब्रह्म जैसी चर्या। परमात्मा तथा वेद में विचरण करना ही ब्रह्मचर्य है। वीर्य का नाश ही मृत्यु है और वीर्य की रक्षा ही जीवन है – '**मरणं बिन्दुपातेन, जीवनं बिन्दुधारणम्।**'[1] गुप्त इन्द्रिय के संयम का नाम ही ब्रह्मचर्य है – '**ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः।**'[2] वेदों का अध्ययन करना, ईश्वर की उपासना करते हुए वीर्य की रक्षा करना ब्रह्मचर्य है। शरीर, मन और वाणी द्वारा मैथुन का त्याग ब्रह्मचर्य कहा जाता है – "**ब्रह्मचर्यं नाम सर्वावस्थासु मनोवाक् कायकर्मभिः सर्वतः मैथुनत्यागः।**"[3] यह ब्रह्मचर्य की विस्तृत व्याख्या है। ब्रह्मचर्य दो प्रकार का है – शारीरिक व मानसिक। ब्रह्मचर्य में कामुकता के विचारों का भी त्याग किया जाता है, शारीरिक ब्रह्मचर्य में कानों से कामुकता भरे विचारों को न सुनना, आँखों से अश्लील चित्र आदि को न देखना, इन सभी का त्याग करते हुए वीर्य की रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य है। इस प्रकार कह सकते हैं कि वीर्य का नाश न करते हुए जितेन्द्रिय रहना तथा अन्य सब इन्द्रियों पर नियन्त्रण करते हुए उपस्थ इन्द्रिय का संयम ही ब्रह्मचर्य है।

योग साधना और ब्रह्मचर्य – योग-साधना और ब्रह्मचर्य का बहुत गहरा सम्बन्ध है। ब्रह्मचर्य के बिना योग-साधना में साधक एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। ब्रह्मचर्य ही परम सुख का प्रवेश द्वार है। मोक्ष का द्वार खोलने की कुंजी है। योग-साधना में वास्तविक उन्नति प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है। ब्रह्मचर्य-पालन के लिए मन और इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना आवश्यक है, क्योंकि मन और इन्द्रियों की तृष्णा ही मनुष्य में उत्तेजना तथा अशान्ति लाती है। इन्द्रियों को उनके विषयों से हटाना ही ब्रह्मचर्य है, जो योग-साधना के लिए परम आवश्यक है, जिस पर चलकर हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। जैसे बताया गया है कि वीर्य की रक्षा ही जीवन है, वीर्य का नाश ही मृत्यु है, तो साधक को वीर्य-रक्षा करनी चाहिए, ताकि शक्ति (ऊर्जा) का प्रयोग आध्यात्मिक उन्नति या योग-साधना के लिए कर सके।

योग-साधना में ब्रह्मचर्य की महत्ता – मुण्डकोपनिषद में बताया गया है कि ब्रह्मचर्य की उत्पत्ति विराट पुरुष यानि परब्रह्म से हुई है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि योग-साधना के लिए ब्रह्मचर्य पहला साधन है।[४] जो साधक धैर्य से चिरकाल तक ब्रह्मचर्य की साधना करता है, वह विशुद्ध

होकर सिद्ध गति को प्राप्त होता हुआ साधना-मार्ग में आगे बढ़ता है।[५] योग-साधना में ही नहीं, बल्कि सभी स्त्री-पुरुषों के लिए बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है।[६] ब्रह्मचारी के लिए कुछ भी प्राप्त करना असम्भव नहीं है, चाहे वह आध्यात्मिक क्षेत्र में हो या भौतिक क्षेत्र में। ब्रह्मचर्य सचमुच में बहुमूल्य धन है, प्रभावशाली औषधि है, जिसके द्वारा हम योग-साधना मार्ग पर चलकर अपने परम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।[७] ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके ही ब्रह्म को प्राप्त किया जा सकता है – '**यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति**'[८]। ब्रह्मचर्य से बढ़कर कोई तप या तपस्या नहीं कही गई है। ब्रह्मचर्य को सर्वोत्कृष्ट तप कहा गया है – '**न तप इत्याहुः देवो न तु मानसः**।।[९]' यह भी माना जाता है कि ब्रह्मचर्य के तप से मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की जा सकती है – **ब्रह्मचर्येण तपसा देवेभ्यः स्वराभरता।**[१०]''

ब्रह्मचर्य के पालन से योगी का ओज, तेज, कान्ति वीर्य, बल तथा पराक्रम बढ़ जाता है, ब्रह्मचर्य के बिना कोई भी स्त्री-पुरुष योगी या योगिनी नहीं बन सकता – **ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः**।[११] ब्रह्मचर्य व्रत-पालन के लाभ का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जो आयु के प्रथम चरण में ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वे बल और पराक्रम को प्राप्त कर लेते हैं। अगर वे अपनी ऊर्जा का प्रयोग योग-साधना के मार्ग पर लगाएँ, तो वे अपने जीवन-लक्ष्य (परम सत्य) को प्राप्त कर लेते हैं – **यो बिभर्ति दाक्षायणं कृणुते दीर्घमायुः**।[१२] ब्रह्मचर्य, तपस्या और श्रद्धा के बारे में यह कहा गया है कि इनका व्यावहारिक अनुभव गुरु के आश्रम में ही हो सकता है। हमें श्रद्धा और भक्तिपूर्वक गुरु के प्रति समर्पण भाव रखते हुए गुरु से विनम्र निवेदन करना चाहिये, तभी साधक इस ज्ञान को ग्रहण कर सकता है। वह कर्मयोगी की भाँति अपनी मानसिक वृत्तियाँ बनाये और फिर गुरु के पास रहकर एक वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करे। तप, भक्ति और श्रद्धा-भाव से रहे, तभी उसे आत्मज्ञान के बारे में पता चलेगा, जो योग-साधना के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है – '**तान्ह स ऋषिरुवाच भूय एव तपसा ब्रह्मचर्येण।**'[१३] जो ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य और तप से श्रद्धा और भक्ति से उत्तरायण मार्ग की खोज करते हैं, वे ब्रह्म को प्राप्त हो जाते हैं, जो जीवन का मुख्य ध्येय है। वे जीवन के सभी द्वंद्वों से मुक्त हो जाते हैं और भय से भी मुक्ति की प्राप्ति होती है, साधक आवागमन, पुनर्जन्ममरण के चक्र से मुक्त हो जाता है –

अथोत्तरेण तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया।
विद्ययाऽऽत्मानमन्विष्यादित्यमभिजयन्ते।।[१४]

जो विद्वान पुरुष दोनों का निराकरण करता हुआ सद्गुणों व कर्मों को करता है, वह स्वयं को निष्पक्षता से निरीक्षण करता है, वही पुरुष वीर्य की पूर्ण रक्षा करने में समर्थ हो सकता है और योग-साधना के मार्ग में आगे बढ़ सकता है – **सम्पश्श्रमाना अदन्नभि रेतसो दुधानाः**।[१५] जो साधक ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करता है, उसे किसी भी प्रकार का दुख नहीं हो सकता, किसी भी पुण्य कर्म और शरीर के स्वस्थ रहने का कारण भी ब्रह्मचर्य ही है – **ब्रह्मचारी न व काञ्चनत्ति-मार्च्छति।**[१६]

ब्रह्मचर्य को शरीर का आधार कहा गया है, जैसे भवन का आधार नींव होती है। आर्यावर्त में जब तक ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता था, तब तक देश उन्नति के शिखर पर था। जब ब्रह्मचर्य रूपी खम्भा विखण्डित हुआ, तो देश नष्ट-भ्रष्ट हो गया है। कहा गया है – '**आहारशयनं ब्रह्मा नित्यमागारमिव धारणैः**।।'[१७] ब्रह्मचारी व्यक्ति ही ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ वेदों का अध्ययन करता है और जितेन्द्रिय होता है। अपने तपोबल के कारण ही उसकी समाज में प्रतिष्ठा बढ़ती है, वह स्वयं अपना कल्याण तो करता ही है, वह अन्य लोगों को भी धर्म और सन्मति का मार्ग दिखाकर परम तत्त्व या परमानन्द की प्राप्ति कराने में उनकी सहायता करता है – '**पूर्वो जातो ब्राह्मणो अमृतेन साकम्**।।'[१८] पूर्ण ब्रह्मचारी ही वेद विद्या से और ईश्वर के प्रकाश से मोक्ष के रास्ते पर चलता है और अन्य सभी बाह्य पाखण्डों का खण्डन करता है। वही परम तत्त्व को प्राप्त कर सकता है – '**ब्रह्मचारी जनयन भूत्वासुरस्ति तैः**।'[१९]

ब्रह्मचर्य को ही यज्ञ कहा गया है। जो सम्पूर्ण सुखों में सर्व सुख कहा जाता है, वह भी ब्रह्मचारी ही है। ब्रह्मचारी ही ब्रह्मचर्य से विद्या आदि अपने सद्गुणों में वृद्धि कर सकता है। वही सबके ज्ञाता ईश्वर, परब्रह्म को जान सकता है, जिसमें सर्व सुख प्राप्त होता है। ब्रह्मचर्य से ही साधक मननशील होकर परमात्मा का ध्यान कर सकता है और अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है – ''**अथ यद्यज्ञ इत्याचक्षे ब्रह्मचर्येण ह्येवात्मान**।।''[२०] ब्रह्मचर्य-पालक ब्रह्मचारी से आचार्य भी अपने ज्ञान में और अधिक वृद्धि करने के लिए प्रीति करता है – '**ब्रह्मचर्येण तपसा ब्रह्मचारिणमिच्छते।**'[२१]

जगत में धर्म को पालन करने के लिए यश को बढ़ाने वाला ब्रह्मचर्य ही है। वाग्भट्ट ने कहा है कि ब्रह्मचर्य ही

उत्तम साधन है, जो इस लोक और परलोक को सुधारता है। ऋषि-मुनियों ने भी स्वीकार किया है कि सांसारिक सुख तो आयु के अधीन है – **धर्म्यं यशस्यामायुष्यं कान्तं निर्मलम्।**[२२]

भक्ति सागर में स्वामी चरणदास ने ब्रह्मचर्य-रक्षण आठ प्रकार के बताए हैं। इन आठों प्रकारों से साधक को वीर्य का पतन नहीं होने देना चाहिए। ये आठ प्रकार हैं – स्त्री स्मरण, अपने कानों से स्त्री की आवाज न सुनना, स्त्री-स्वरूप को स्मृति में न देखना, शृंगार साहित्य न पढ़ना, स्त्रियों से मजाक न करना, अकेले में बातचीत न करना, उनसे मिलने के बहाने त्याग देना, स्त्री स्पर्श का त्याग करना। इन आठ प्रकार से ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाला साधक ही पूर्ण ब्रह्मचारी है।

इस प्रकार ब्रह्मचारी के सामने सभी इच्छाएँ हार मानकर बैठ जाती हैं। वह सभी बाधाओं को पार करता हुआ परम सत्य को प्राप्त कर लेता है। यही सर्वोत्तम सुख है। इससे समाधि की प्राप्ति हो जाती है। योगी के लिए कुछ पाना शेष नहीं रहता। सृष्टि स्वयं मर्यादाओं का पालन करती है और मनुष्य को भी सतत मर्यादाओं का पालन करने का उपदेश देती है अर्थात् योगी को भी निरन्तर मर्यादाओं का पालन करते हुए योग-साधना में आगे बढ़ना चाहिए। भोगों से शान्ति नहीं मिलती – **न भोगात् रागशान्तिर्मुनिवत्।**[२३] भोगों को हम नहीं भोगते। भोग स्वयं हमें भोग लेते हैं। तप को तपा नहीं जाता, हम स्वयं उसमें तप जाते हैं। काल का अन्त नहीं होता। अन्त में हम ही काल में समा जाते हैं। भोग भोगने से हमारी इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं, बल्कि और अधिक बढ़ जाती हैं – **भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता रोगा न जीर्णाः वयमेव जीर्णाः।**[२४] वासनाओं की कभी तृप्ति नहीं होती, बल्कि भोगने पर वासनाएँ और बढ़ जाती हैं। वासनाएँ अग्नि में घी डालने के समान हैं। घी डालने पर अग्नि और प्रज्वलित होती है। उसी प्रकार हमारी वासनाएँ भी बढ़ती जाती हैं –

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्म एव भूय एवाऽभिवर्धते।।[२४]

वीर्य का निर्माण भोजन से होता है। भोजन के पाँच दिन बाद रस, रस से रक्त, रक्त से माँस, माँस से हड्डी, हड्डी से मज्जा, मज्जा से सातवाँ पदार्थ वीर्य बनता है। वीर्य से शरीर में तेज रहता है। इसलिए वीर्य की रक्षा करना आवश्यक है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में कहा गया है कि वीर्य ही आत्मा है। इसकी रक्षा करना ही स्वास्थ्य है। इसके नष्ट होने पर मनुष्य शारीरिक, मानसिक, अध्यात्मिक उन्नति प्राप्त नहीं कर सकता। आध्यात्मिक उन्नति में ब्रह्मचर्य की अहम भूमिका है – ''**रसाद्रक्तः ततो शुक्रसम्भवः।।**[२६]'' योगी ब्रह्मचर्य, वेद अध्ययन और इन्द्रिय-दमन रूप मृत्यु के कारणों को दूर कर देते हैं। ब्रह्मचारी व्यक्तियों को ही परमात्मा मुक्ति रूपी परम सुख प्रदान करता है। ब्रह्मचर्य व्रत-पालन के लाभ का वर्णन करते हुए कहा गया है कि जो आयु के प्रथम चरण में ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, वे विद्याप्राप्ति में समर्थ होते हैं। ब्रह्मचर्य-पालन से साधारण मनुष्य हो या विद्वान; सभी दीर्घायु को प्राप्त कर लेते हैं। सब विद्वान पुरुष और साधक पूर्व काल से ही ब्रह्मचर्य का आचरण करते हुए ही आगे बढ़ते हैं, आनन्द पाते हैं – ''**ब्रह्मचारिणं पितरो देवजनाः ... षट्सहस्राः सर्वान्त्स देवांस्तपसा पिपर्ति।**''[२७]

आयु के हितकर जितने पदार्थ हैं, उन सबसे श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य है। पूर्वकाल के ज्ञानी, मुनि, पराक्रमी होकर उन्नति के शिखर पर पहुँचे थे। चरकसूत्र में **ब्रह्मचर्यमायुष्यकराणाम्**[२८] कहा गया है। इसका मुख्य कारण था कि वे अपनी सन्तानों का उत्तम ब्रह्मचर्य का पालन करवाते थे। इन्होंने कभी बाल-विवाह की कुशिक्षा नहीं दी। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि योग-साधना में ब्रह्मचर्य की निर्णायक भूमिका है।

निष्कर्ष – इस प्रकार हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि योग-साधना में ब्रह्मचर्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह योग साधना रूपी सुखमय जीवन जीने के लिए पहली सीढ़ी के समान है, इस पर चढ़ने के बाद ही साधक मंजिल की अगली सीढ़ियों पर चढ़ने के योग्य होता है। एक बह्मचारी साधक ही योग के अगले अंगों यम-नियम, आसन, प्राणायाम आदि को साधकर ध्यान के द्वारा समाधि को प्राप्त हो सकता है। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. व्यास भाष्य २/३८ **२.** पातंजल योग प्रदीप पृष्ठ स. ४१९ **३.** योगदर्शनम्, स्वामी सत्यपति परिव्राजक, पृष्ठ सं. १७५ **४.** मुण्डकोपनिषद्, २/१/७ **५.** चिरउसिदव भयारी सिद्धिगदि जादि, मूला, पट्टकेराचार्य प.गा.१०२ **६.** चिरउसिदव भयारी सिद्धिगदि जादि, मूला, पट्टकेराचार्य प.गा.१०२, अथर्ववेद ११/५/१९ **७.** साधना, स्वामी शिवानन्द, पृ. सं. १२७ **८.** कठोपनिषद् १/१/१५ **९.** पातंजल योगदर्शन, पृष्ठ-४१७ **१०.** अथर्ववेद अध्याय ११/३/५/१९ **११.** योग २/३८ **१२.** यजु. ३४/५१ **१३.** प्रश्नोपनिषद् २/२ **१४.** प्रश्नोपनिषद् १/१०/१ **१५.** ऋग्वेद ३/३१/१० **१६.** शत.कों का. प्र.३ ब्रा. ६ क.१ **१७.** अष्टांग हृदय, सूत्र स्थान अ ७ **१८.** अथर्ववेद को ११/३/५/५ **१९.** अर्थ., ११/३/५/७ **२०.** मनु विद्यमनुते२ छा.प्र. २ इ ख **२१.** अथर्ववेद ११/३/५/१७ **२२.** अष्टा, उत्तरास्थान अ ११८ **२३.** सांख्य दर्शन ४.२७ **२४.** भर्तहरीः वैराग्य शतक - ९२ **२५.** मनुस्मृति। २/९४ **२६.** योग प्रदीपिका पृ. ४३९ **२७.** अथर्ववेद ११/३/५/२ **२८.** ब्रह्मचर्यमायुष्यकराणाम्।।३३।। च.सू. अ. २५

नादानुसन्धान विधि : आत्मसाक्षात्कार की ओर एक कदम

डॉ. गीता योगेश भट्ट

योग प्रशिक्षिका व सेन्टेनरी विजिटिंग फेलो

भारत अध्ययन केन्द्र, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

शरीर एवं मन; दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं। शरीर की अपेक्षा मन प्रबल है। इसलिये मन का शरीर पर विशेष प्रभाव पड़ता है। शरीर में व्याधि होने पर मन एवं मन में क्लेश होने पर शरीर प्रभावित होता है। अर्थात् क्लेशों के द्वारा मानसिक विकार के साथ-साथ शारीरिक विकार भी होते हैं। इसलिए कह सकते हैं कि अस्सी प्रतिशत व्याधियाँ मनोविकार के कारण उत्पन्न होती हैं। शेष अयुक्ताहार (अनुपयुक्त आहार-विहार) के कुयोग से उत्पन्न होती हैं।

आज की इस भाग-दौड़ की दुनिया में सभी तनावग्रस्त हो रहे हैं, जिसके कारण अनेकों रोगों की उत्पत्ति हो रही है। नये-नये अस्पताल खुल रहे हैं, चिकित्सकों की अभिवृद्धि हो रही है। फिर भी सभी रोगग्रस्त हो रहे हैं। ऐसा क्यों? क्योंकि आवश्यकतायें बढ़ रही हैं। आविष्कार हो रहे हैं, किन्तु उनका सम्यक् उपयोग नहीं हो रहा है। इसके कारण वातावरण में प्रदूषण तथा मनोवृत्तियों में असन्तुलन होने से मानसिक क्लेश, शरीर में अनेकों व्याधियाँ अपना घर बना रही हैं। आज लोग भोग-विलासी हो गये हैं। कोई भी परिश्रम नहीं करना चाहता है। सभी टैबलेट के सहारे जीवन व्यतीत कर रहे हैं। कोई-कोई प्राणी ऐसे हैं, जो संयमित एवं सन्तुलित जीवन बिताते हैं। शेष सभी एक-दूसरे को देखकर चल रहे हैं। बुद्धि प्रमाद (प्रज्ञापराध) होने पर क्लेश, अकर्मण्यता एवं रोगोत्पत्ति होती है।

योग एक ऐसी विद्या है, जिसके अभ्यास से व्यक्ति सर्वदा नीरोग जीवन व्यतीत कर सकता है। हठयोग के अभ्यासों से शरीर एवं मन को सन्तुलित किया जा सकता है। शरीर में सन्तुलन हेतु आसन एवं मन को सन्तुलित करने के लिये हठयोग विज्ञान ने प्राणायाम के अन्तर्गत विविध कुम्भकों का विधान किया है।

परिचय – नादानुसन्धान विधि एक प्राचीन भारतीय तकनीक है, जो ध्वनि और संगीत के माध्यम से मानसिक

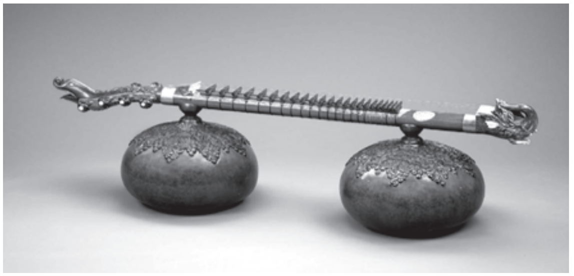

सन्तुलन और शान्ति प्राप्त करने में मदद करती है। यह विधि प्राचीन भारतीय दर्शन और योग के सिद्धान्तों पर आधारित है, जो मानसिक तनाव और चिन्ता को दूर करने में सहायक होती है। नाद का अर्थ है शब्द या ध्वनि। संगीत शास्त्र के अनुसार आकाशस्थ अग्नि और वायु के संयोग से नाद उत्पन्न होता है। सम्पूर्ण जगत नाद से भरा हुआ है। अनुसन्धान का अर्थ है कोई वस्तु जो पहले से विद्यमान है, उसे दोबारा खोजना। नाद-अनुसन्धान का अर्थ है नाद के साथ सम्बन्ध जोड़ना। यह अनुसन्धान या खोज तो स्वयं के आन्तरिक जगत की है।

नादानुसन्धान विधि के मुख्य तत्त्व

१. नाद योग : नाद योग में विभिन्न ध्वनियों का उपयोग करके शरीर और मन को सन्तुलित किया जाता है।

२. प्राणायाम : प्राणायाम श्वास-नियन्त्रण की एक तकनीक है, जो मानसिक तनाव और चिन्ता को दूर करने में मदद करती है।

३. ध्यान : ध्यान एक तकनीक है, जो मन को एकाग्र और शान्त करने में मदद करती है।

नाद की अवस्थायें – महर्षि स्वात्माराम जी ने हठप्रदीपिका में नाद की चार अवस्थायें बतायी हैं – आरम्भावस्था, घटावस्था, परिचयावस्था, निष्पत्ति अवस्था।

१. **आरम्भावस्था** – आरम्भावस्था में ब्रह्मग्रन्थि के भेदन से आनन्द का अनुभव होता है तथा शरीर अर्थात् अन्त: शरीर में शून्यसम्भूत असाधारण क्षण-क्षण रूप अनाहत शब्द सुनाई पड़ता है। वह योगी तब दिव्यदेह, ओजस्वी, दिव्यगन्ध वाला, नीरोगी, प्रसन्नचेतस् एवं शून्यचारी हो जाता है।

२. **घटावस्था** – घटावस्था में योगी के आसन में दृढ़ होने पर विष्णुग्रन्थि के भेदन से निबद्धवायु का सुषुम्ना में संचार होता है। तब अतिशून्य अर्थात् कपालकुहर में परमानन्द की सूचक भेरी (वाद्ययन्त्र) एवं आघातजन्य शब्द सुनाई देते हैं। तब योगी ज्ञानी तथा देवतुल्य हो जाता है।

३. **परिचयावस्था** – परिचयावस्था में साधक को भ्रूमध्याकाश में ढोल की ध्वनि जैसा नाद सुनाई देता है। तब प्राण सभी सिद्धियाँ प्रदान करने महाशून्य (अन्तराकाश) में पहुँचता है।

४. **निष्पत्ति अवस्था** – निष्पत्ति अवस्था में जब वायु रुद्र-ग्रन्थि का भेदन कर आज्ञाचक्र स्थित शिव के स्थान में पहुँचता है, तब साधक को वीणा का झंकृत शब्द सुनाई देता है।

स्वामी महेशानन्द जी ने शिवसंहिता में नाद की चार अवस्थाएँ बताई हैं – आरम्भ, घट, परिचय एवं निष्पत्ति; ये उत्तरोत्तर क्रमश: परिणत होती जानेवाली साधक के शरीर, इन्द्रियाँ, चित्त, अनुभूतियाँ आदि की श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम अवस्थायें हैं।

१. आरम्भ अवस्था – इसमें नाड़ी शुद्धि, सुकान्ति, ये ही वायुसिद्ध होने के लक्षण कहे गये हैं। २. घटावस्था – इसकी सार्थकता निष्पत्ति में पायी जाती है, जिसके फलस्वरूप प्राण-अपान, नाद-बिन्दु, जीवात्मा-परमात्मा का योग होता है, जिसे घट कहते हैं। ३. परिचयावस्था – इसमें अभ्यास के परिणामस्वरूप योगियों की प्राणवायु इडा-पिंगला को त्यागकर स्थिर हो जाती है, तब परिचयावस्था हो जाती है। ४. निष्पत्ति अवस्था – जब निष्पत्ति अवस्था सम्पन्न होती है, तब जीवन्मुक्त, शान्त, धीर योगी की समाधि स्वेच्छानुसार होती है।

प्रारम्भिक तैयारी – इस प्रक्रिया को प्रारम्भ करने से पहले, कुछ मानसिक और शारीरिक तैयारियाँ आवश्यक हैं – **शान्त वातावरण** : एक शान्त और प्राकृतिक स्थान का चयन करें। **संगीत का चयन** : ध्यान करने के लिए ऐसा संगीत चुनें, जो आपकी आत्मा को स्पर्श कर सके। **शारीरिक आराम** : ध्यान में बैठने की सही मुद्रा अपनाएँ।

ध्यान की प्रक्रिया – ध्यान नादानुसन्धान की सबसे महत्त्वपूर्ण विधि है। यह क्रिया व्यक्ति को अपनी आन्तरिक आवाज और ध्वनि को सुनने में सहायता करती है।

१. **आरामदायक स्थिति अपनाना** – सबसे पहले, एक शान्त स्थान पर आरामदायक मुद्रा में बैठें। आपकी पीठ सीधी होनी चाहिए।

२. **श्वास पर ध्यान केन्द्रित करना** – अपनी आँखें बन्द करें और गहरी श्वास लें। अपनी नाक से श्वास अंदर लें और मुँह से छोड़ें। यह प्रक्रिया आपको मानसिक शान्ति देगी।

३. **ध्वनि को सुनना** : ध्यान करते समय अपने अन्दर की ध्वनियों पर ध्यान दें। ये ध्वनियाँ आपके तनाव और चिन्ताओं को व्यक्त कर सकती हैं।

४. **समीक्षा करना** : ध्यान के बाद अपने अनुभवों को लिखें। यह आपको आगे की प्रक्रिया में सहायता करेगा।

संगीत का महत्त्व – संगीत नादानुसंधान का एक प्रमुख भाग है। विभिन्न संगीत शैलियाँ मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद कर सकती हैं।

राग और स्वर : भारतीय शास्त्रीय संगीत में राग और स्वर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। हर राग का एक विशेष भाव और ऊर्जा होती है। इसलिए सही राग का चयन करना महत्त्वपूर्ण है।

भक्ति संगीत : भक्ति संगीत, जैसेकि कीर्तन और भजन, आत्मा की गहराइयों को छूने में सक्षम होते हैं। ये संगीत साधक को न केवल मानसिक शान्ति देते हैं, बल्कि आत्मिक अनुभव भी कराते हैं।

ध्यान संगीत : इस प्रकार का संगीत विशेष रूप से ध्यान के लिए तैयार किया जाता है। इसका उद्देश्य साधक को अपनी आन्तरिक ध्वनि से मिलाना होता है।

स्वरों का उच्चारण – स्वर की उच्चारण विधि नादानुसन्धान की मूलभूत विशेषता है। इसे करने के लिए निम्नलिखित चरणों का पालन किया जा सकता है –

स्वरों का उच्चारण : 'आ', 'इ', 'उ' जैसे स्वर उच्चरित करें। ये स्वर आपकी आन्तरिक ध्वनि को पहचानने और उसे साफ करने में सहायता करते हैं।

मन्त्र जप – ओम्, सोहम् या अन्य मंत्रों का जप करें। ये मंत्र आपके आत्मिक विकास में सहायता करते हैं।

ध्वनि का अनुभव – जब आप स्वर या मन्त्र का उच्चारण करते हैं, तो इसका अनुभव करें। अपने अंदर की ध्वनि को सुनें।

नाद की पहचान – जब आप अपनी ध्वनि के साथ सामञ्जस्य बिठाने लगते हैं, तो आप विभिन्न नादों की पहचान कर सकते हैं –

सकारात्मक और नकारात्मक ध्वनियाँ – अपनी आन्तरिक आवाज की पहचान करें। कौन-सी ध्वनि आपको सशक्त बनाती है और कौन-सी दुर्बल करती है?

आध्यात्मिक नाद : ध्यान में गहरे जाते हुए, आप आन्तरिक नादों का अनुभव कर सकते हैं। ये नाद आपको आत्मिक जागरूकता की ओर ले जाएँगे।

नादानुसन्धान विधि के लाभ : नाद से उत्पन्न लय तत्क्षण ही आनन्दप्रदायक होता है। नाद के विषय में एवं उसकी ध्वनि के विषय में नाद-बिन्दु उपनिषद में कहा गया है कि यह नाद कभी तेज, तो कभी बहुत धीरे सुनाई देता है। कभी यह नाद सुनाई देता है, तो कभी बन्द हो जाता है। नाद को सुनने का अभ्यस्त होने पर ही योगी समाधि अवस्था में पहुँचता है। जब नाद प्रथम बार सुनाई देता है, तो यह तेज एवं अलग-अलग प्रकार का सुनाई देता है, किन्तु जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ता जाता है, यह ध्वनि और सूक्ष्म हो जाती है। पहली नाद-ध्वनि समुद्र में उठनेवाली भयंकर लहरों की टकराहट से उत्पन्न ध्वनि जैसी प्रतीत होती है। मध्य भाग में मांदल और घण्टा-ध्वनि सदृश होती है। अन्त में यह बंसी की मधुर वाणी और भ्रमर-गुंजन की आकर्षित ध्वनि में परिवर्तित हो जाती है। जो साधक कर्कश आवाज से घबरा जाते हैं, उन्हें यह नाद बाद में सुनाई नहीं देता, किन्तु जो साधक धैर्यपूर्वक इस कर्कश नाद को सुनते हैं, उन्हीं को यह नाद मधुर से मधुरतम सुनाई पड़ता है और धीरे-धीरे साधक का मन नाद-ध्वनियों में स्थिर भाव होकर आनन्द प्राप्त करने लगता है। हठप्रदीपिका में कहा गया है –

अभ्यस्यमानो नादोऽयं बाह्यमावृणुते ध्वनिम्।
पक्षाद् विक्षेपमखिलं जित्वा योगी सुखी भवेत्।।[१]

इस नाद के अभ्यास से बाहरी ध्वनि लुप्त हो जाती है और साधक सभी प्रकार के विघ्नों को जीत कर सुखी हो जाता है –

श्रूयते प्रथमाभ्यासे नादो नानाविधो महान्।
ततोऽभ्यासे वर्धमाने श्रूयते सूक्ष्मसूक्ष्मकः।।[२]

अर्थात् अभ्यास के प्रथम चरण में विविध प्रकार के गम्भीर नाद सुनाई देते हैं। बाद में अभ्यास बढ़ने पर सूक्ष्म से सूक्ष्मतर नाद सुनाई देते हैं। सर्वप्रथम समुद्र, मेघ, भेरी, झर्झर-नाद के समान, मध्य में ढोल, शंख, घण्टा तथा घड़ियाल से उत्पन्न के समान और अन्त में किङ्किणी, वेणु, वीणा तथा भ्रमर-गुंजार के समान सुषुम्ना में उद्भूत नाना प्रकार के नाद सुनाई देते हैं। गम्भीर ध्वनि बाद में सूक्ष्म होती जाती है। मन भी स्थिर होने लगता है। जिस प्रकार मकरन्द (फूलों का रस) का पान कर भ्रमर उसके गंध की अपेक्षा नहीं रखता, उसी प्रकार नाद में लीन चित्त बाह्य विषयों की अपेक्षा नहीं रखता।

मनोमत्तगजेन्द्रस्य विषयोद्यानचारिणः।
नियन्त्रणे समर्थोऽयं निनादनिशिताङ्कुशः।।[३]

अर्थात विषय रूपी उद्यान में विचरण करनेवाले इस चित्त रूपी मदोन्मत्त हाथी को वश में करने हेतु वह नाद रूपी अति तीक्ष्ण अंकुश सर्वथा समर्थ है। शिवसंहिता में कहा गया है –

यदा परिचयावस्था भवेदभ्यासयोगतः।
त्रिकूटं कर्मणां योगी तदा पश्यति निश्चितम्।।[४]

– जब अभ्यास के परिणामस्वरूप परिचयावस्था प्राप्त होती है, तब योगी तीनों कर्मबन्धों (प्रारब्ध, संचित एवं क्रियमाण) को निश्चयपूर्वक जान लेता है।

नाद के स्वरूप का उदाहरण देते हुए कहा गया है कि नाद रूपी बन्धन से बँधा हुआ अर्थात् नाद में आसक्त हुआ चित्त सम्यक् प्रकार से अपनी चंचलता को छोड़ देता है। अर्थात् क्षण-क्षण में विषय-ग्रहण एवं परित्याग रूपी चंचलता को छोड़कर मन भली प्रकार से स्थिरता को प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए आकाश में उड़नेवाले पक्षी के यदि पंख काट लिए जाएँ, तो वह एक ही स्थान पर बैठा रहेगा, ठीक उसी प्रकार प्रतिक्षण विषय बदलते रहनेवाला चित्त एकमात्र नाद में आसक्त होकर स्थिरता को प्राप्त होता है। नादानुसंधान विधि से वर्तमान मानव भी कुछ बिन्दुओं पर सीधे-सीधे लाभान्वित हो सकता है और इसके माध्यम से अपने दैनन्दिन जीवन में उठ रही समस्याओं से मुक्ति पा

सकता है – १. मानसिक तनाव और चिन्ता को दूर करने में सहायता करती है। २. मन को शान्त और एकाग्र करने में सहायता करती है। ३. शरीर और मन को सन्तुलित करने में सहायता करती है। ४. नींद की गुणवत्ता में सुधार करने में सहायता करती है। ५. प्रतिरक्षा प्रणाली को सबल करने में सहायता करती है।

नादानुसन्धान विधि के ग्रन्थिक सन्दर्भ – योग ग्रन्थों में नादानुसन्धान की अवधारणा को गहराई से समझाया गया है। विशेष रूप से, हठयोग प्रदीपिका और गीता जैसे ग्रन्थों में नाद का महत्त्व दर्शाया गया है। हठयोग प्रदीपिका में नाद को ध्यान की एक महत्त्वपूर्ण विधि माना गया है। इस ग्रन्थ के अनुसार ध्यान के माध्यम से साधक अपनी आन्तरिक ध्वनि को सुनकर अपने मन को नियन्त्रित कर सकता है और अवबोधन प्राप्त कर सकता है। पतंजलि के योग-सूत्रों में भी नाद का उल्लेख है। यहाँ नाद को ध्यान और समाधि की ओर ले जाने वाले एक साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इसे ध्यान के माध्यम से शान्ति प्राप्त करने और आत्मा के अनुभव का मार्ग बताया गया है।

१. उपनिषद – 'नादेन आत्मा प्रवेश्यन्ति' (तैत्तिरीय उपनिषद १.६) – यह श्लोक नाद के माध्यम से आत्मा के साथ जुड़ने की प्रक्रिया को दर्शाता है। २. योगसूत्र – 'प्राणायामश्चित्तप्रसादनम्' (पतंजलि योगसूत्र १.३४) – यह श्लोक प्राणायाम के महत्त्व को दर्शाता है। ३. हठयोगप्रदीपिका – 'नादयोगाधिकारे तिष्ठन्ति' (हठयोगप्रदीपिका ४.१) – यह श्लोक नादयोग के महत्त्व को दर्शाता है। ४. नादबिन्दु उपनिषद – 'नादबिन्दु सामर्थ्यात् आत्मा प्रवेश्यन्ति' (नादबिन्दु उपनिषद १.१) – यह श्लोक नाद के माध्यम से आत्मा के साथ जुड़ने की प्रक्रिया को दर्शाता है। ५. शिव संहिता – 'नादयोगेन योगिनां सिद्धिर्भवति' (शिव संहिता ५.१४५) – यह श्लोक नाद योग के माध्यम से योग-सिद्धि को प्राप्त करने की प्रक्रिया को दर्शाता है। ६. गीता में ध्यान और योग के महत्त्व को दर्शाया गया है। ७. तन्त्रालोक – 'नादयोगस्तन्त्रालोके प्रतिपादितः' (तन्त्रालोक ३.१) – यह श्लोक नाद योग के महत्त्व को दर्शाता है। ८. नादयोग कोश – 'नादयोगेन आत्मसाक्षात्कारः' (नादयोग कोश १.१) – यह श्लोक नाद योग के द्वारा आत्मसाक्षात्कार प्रक्रिया को दर्शाता है।

नादानुसन्धान विधि का अभ्यास करने से आप अपने मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं। ये कुछ विधियाँ हैं, जिनसे आप नादानुसन्धान विधि का अभ्यास कर सकते हैं –

१. नाद योग का अभ्यास करें : नाद योग में विभिन्न ध्वनियों का उपयोग करके शरीर और मन को सन्तुलित किया जाता है।

२. प्राणायाम का अभ्यास करें : प्राणायाम श्वास-नियंत्रण की एक तकनीक है, जो मानसिक तनाव और चिन्ता को दूर करने में सहायता करती है।

३. ध्यान का अभ्यास करें : ध्यान एक तकनीक है, जो मन को एकाग्र और शान्त करने में सहायता करता है।

४. नादानुसंधान विधि के ग्रन्थों का अध्ययन करें : उपनिषद, योगसूत्र, हठयोगप्रदीपिका, नादबिन्दु उपनिषद, शिव संहिता, गीता, तन्त्रालोक और नादयोग कोश जैसे ग्रन्थों का अध्ययन करें।

५. नादानुसन्धान विधि के विशेषज्ञों से सीखें : नादानुसंधान विधि के विशेषज्ञों से सीखने से आप इसके अभ्यास में अधिक प्रभावी हो सकते हैं।

नादानुसन्धान विधि के अभ्यास से आप अपने जीवन में शान्ति, सन्तुलन और सुख प्राप्त कर सकते हैं।

नादानुसन्धान का महत्त्व

१. आध्यात्मिक सन्दर्भ – हिन्दू शास्त्रों में नाद को दिव्य स्वर माना गया है। नाद ब्रह्म ही नहीं, बल्कि सृष्टि की उत्पत्ति का आधार भी है। उपनिषदों में उल्लेखित 'नाद ब्रह्म' का सिद्धान्त दर्शाता है कि सभी जीवों और ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति ध्वनि से हुई। योगग्रन्थों, विशेषकर 'योगसूत्र' और 'हठयोग प्रदीपिका' में भी नाद का उल्लेख है। यहाँ नाद को ध्यान की ओर ले जानेवाले एक साधन के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

२. मानसिक स्वास्थ्य – नादानुसन्धान मानसिक स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी है। यह तनाव, चिन्ता और अवसाद को कम करने में सहायता करता है। जब हम अपने अन्दर की ध्वनि को पहचानते हैं, तो हम अपने मन के जाल से बाहर निकलने में सक्षम होते हैं।

३. आत्मसाक्षात्कार की ओर एक कदम – नादानुसन्धान का प्राथमिक उद्देश्य आत्मा का अनुभव करना

और आत्मसाक्षात्कार की ओर बढ़ना है। यह प्रक्रिया व्यक्ति को अपने अन्दर की गहराईयों में ले जाती है।

४. आत्मा का अनुभव – जब आप अपनी आन्तरिक ध्वनि की खोज करते हैं, तो आप अपनी आत्मा का अनुभव कर सकते हैं। इससे अत्यधिक आत्मविश्वास और शान्ति का बोध देता है।

५. आत्म-समर्पण – इसके बाद आपको अपने इष्ट या ब्रह्म के प्रति आत्म-समर्पण करना होगा। यह एक गहरा अनुभव है, जो आपको अपने भीतर की यात्रा में और अधिक गहराई से ले जाता है।

६. ध्यान और समर्पण का संयोजन – ध्यान और समर्पण का संयोजन आपके आत्मिक विकास को तीव्रता से बढ़ा सकता है। नियमित ध्यान और नादानुसन्धान के द्वारा आप अपने जीवन में दिव्यता का अनुभव कर सकते हैं।

निष्कर्ष – नादानुसन्धान विधि एक प्राचीन और प्रभावी तकनीक है, जो मानसिक सन्तुलन और शान्ति प्राप्त करने में सहायता करती है। इसके अभ्यास से आप अपने मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार कर सकते हैं। नाद योग ध्यान की अवस्था को प्राप्त करने का सबसे सरलतम साधन है। इसको कभी भी किया जा सकता है। इससे विभिन्न प्रकार के लाभ होते हैं। इससे हमारे दैनिक जीवन पर भी प्रभाव पड़ता है। यह शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक लाभ भी प्रदान करता है। जैसे-जैसे नाद-साधना में हम आगे बढ़ेंगे, सर्वत्र यह नाद ईश्वर के होने का आभास देगा। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. हठ प्रदीपिका ४/८३ **२.** वही, ४/८४ **३.** वही ३.४/९१ **४.** शिव संहिता ३/७०

कविता

जगन्नाथ का बुलावा आया है

सदाराम सिन्हा 'स्नेही'

चलो-चलो भक्तों महाप्रभु जगन्नाथ का बुलावा आया है ।
हरि दर्शन-संत मिलन चाहत से, भक्तों का मन हर्षाया है ।
रथयात्रा दर्शन संदेशा से, भक्तों का मन अकुलाया है ।

जीवन को सुखमय बनाने, हम जगदीश के दर में जायेंगे ।
चिरकाल की प्रतिक्षा खत्म होगी, जब हम सुभाशीष पायेंगे।।
स्वप्न साकार होंगे सबके, दर्शन बंदन अवसर आया है।।१।।

ऋषि मुनि तपसी संत महंत करते, जिस प्रभु का नित भजन कीर्तन।
अहो भाग्य, समझते भक्त जो करते, जगेश का प्रत्यक्ष दर्शन ।।
युग प्रभु अक्षय आशीष से भक्तगण जीवन को धन्य पाया है ।।२।।

बलभद्र तालध्वज रथारूढ़ हैं, आशीषों का वर्षा करेंगे ।
सुभद्रा दर्पदलन आरूढ़ हो, नारी जाति का दुख हरेंगे ।
कालिया के नन्दिघोष से, कृपा देख देवगण हर्षाया है ।।३।।

युगनाथ अनुग्रह से पाप शाप संताप सभी क्षय हो जाते ।
भवनाथ के दर्शन व जयकारा देख, भक्त विभोर हो जाते ।।
जगप्रभु की महिमा लीला देख सदाराम ने भजन गाया है।।४।।

जब तक सच्चिदानन्द में मन लीन न हो जाए, तब तक उन्हें पुकारना और संसार के काम-काज करना, दोनों बातें चल सकती हैं। उनमें मन तल्लीन हो जाने पर कोई काम करने की आवश्यकता नहीं रहती। जैसे मानो कोई कीर्तन गा रहा है, 'निताई आमार माता हाथी' अर्थात् मेरा नित्यानन्द मतवाला हाथी है। पहले जब वह गाना आरम्भ होता है, तब गीत के शब्द, राग, ताल, मान, लय सभी बातों पर ध्यान रखते हुए सही ढंग से गाता है। फिर जब गीत के भाव में उसका मन थोड़ा मग्न होता है, तब वह केवल 'माता हाथी, माता हाथी' ही कहता है। फिर जब उस भाव में मन और भी तल्लीन हुआ, तब वह केवल 'हाथी, हाथी' ही कहता है। अन्त में जब मन पुरी तरह तल्लीन हो जाता है, तब वह 'हा' कहकर ही भावमग्न होकर चुप हो जाता है।

एक भक्त बहुत जप किया करता था। श्रीरामकृष्ण ने उससे, ''तुम एक ही जगह क्यों अड़े हो? आगे बढ़ो!'' इस पर भक्त ने कहा, ''यह तो उनकी कृपा के बिना नहीं हो सकता।'' तब श्रीरामकृष्ण बोले, ''उनका कृपारूपी पवन तो दिनरात बह ही रहा है। भवसागर पार करना हो तो अपनी नाव का पाल तान दो।''

– श्रीरामकृष्ण देव

आधुनिक चुनौतियाँ और उत्कृष्टता प्राप्त करने के मार्ग

स्वामी गुणदानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

आज के युग में तकनीकी प्रगति, सांस्कृतिक बदलाव एवं वैश्विक प्रतिस्पर्धा के कारण युवा पीढ़ी को अभूतपूर्व चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। यद्यपि प्रत्येक पीढ़ी ने अपने समय में संघर्षों का सामना किया है, किन्तु वर्तमान पीढ़ी को तीव्र गति से बदलती परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को ढालना आवश्यक हो गया है। डिजिटल विक्षेप, मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ, आर्थिक अस्थिरता एवं सामाजिक अपेक्षाएँ, ये सभी बाधाएँ युवाओं के समक्ष उपस्थित हैं। तथापि, इतिहास साक्षी है कि जो व्यक्ति दृढ़ इच्छाशक्ति, समायोजनशीलता एवं उचित दृष्टिकोण को अपनाता है, वह प्रतिकूल परिस्थितियों को भी अपने पक्ष में परिवर्तित कर सकता है।

आइए, आधुनिक समस्याओं का विश्लेषण करें एवं उनसे उन्नति के उपायों को प्रेरणादायक उदाहरणों सहित समझें।

आधुनिक युवाओं के सम्मुख प्रमुख चुनौतियाँ

१. डिजिटल प्रलोभन एवं एकाग्रता की हानि

स्मार्टफोन, सामाजिक संचार माध्यम (सोशल मीडिया) एवं त्वरित मनोरंजन के प्रभाव से आधुनिक युवाओं का ध्यान बँटना एक गम्भीर समस्या बन चुकी है। यद्यपि प्रौद्योगिकी ने अनेक लाभ प्रदान किए हैं, किन्तु इसने सतत एकाग्रता को बाधित कर दिया है।

प्रेरणादायक उदाहरण : माइक्रोसॉफ़्ट के संस्थापक बिल गेट्स 'थिंक वीक' (चिन्तन सप्ताह) नामक एक प्रक्रिया अपनाते थे, जिसमें वे स्वयं को डिजिटल एवं तकनीकी विक्षेप से मुक्त कर गहन अध्ययन एवं नवाचार पर ध्यान केन्द्रित करते थे। इसी अभ्यास ने उन्हें सफलतम उद्यमियों में स्थान दिलाया।

उत्कृष्टता प्राप्त करने के उपाय

– सामाजिक संचार माध्यम (सोशल मीडिया) के उपयोग के लिए समय सीमा निर्धारित करें।

– गहन कार्य प्रणाली अपनाएँ एवं एक समय में एक ही कार्य करें।

– अध्ययन, ध्यान एवं शारीरिक व्यायाम को जीवनशैली में सम्मिलित करें।

– प्रौद्योगिकी को साधन बनाएँ, बाधा नहीं।

२. मानसिक स्वास्थ्य एवं भावनात्मक सन्तुलन

– शैक्षिक प्रतिस्पर्धा, करियर की चिन्ता एवं सामाजिक स्वीकृति की चाह के कारण मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ, जैसे तनाव, अवसाद एवं मानसिक थकान अत्यधिक बढ़ गई हैं।

प्रेरणादायक उदाहरण : हैरी पॉटर नामक उपन्यास क्रम की प्रसिद्ध लेखिका जे. के. रोलिंग आर्थिक तंगी एवं अवसाद से जूझ रही थीं। उन्होंने अपने संघर्ष को सृजनात्मकता में परिवर्तित किया एवं विश्वभर में सफलता प्राप्त की।

उत्कृष्टता प्राप्त करने के उपाय

– मानसिक स्वास्थ्य हेतु परामर्श एवं ध्यान का आश्रय लें।

– आत्मचिन्तन एवं योग द्वारा मानसिक सन्तुलन बनाए रखें।

– सच्चे मित्रों एवं परिवार के साथ सकारात्मक सम्बन्ध बनाएँ।

– बाह्य स्वीकृति के स्थान पर आत्मविकास पर ध्यान केन्द्रित करें।

३. करियर की अनिश्चितता एवं आर्थिक अस्थिरता

वर्तमान समय में स्थायी नौकरियाँ दुर्लभ हो गई हैं। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) एवं स्वचालन (Automation) के कारण कार्यक्षेत्र तीव्रता से परिवर्तित हो रहा है। अतः युवाओं को सतत शिक्षा एवं नवाचार की ओर उन्मुख होना आवश्यक है।

प्रेरणादायक उदाहरण : टेस्ला एवं स्पेसएक्स के संस्थापक एलन मस्क जिन्होंने स्वाध्याय द्वारा रॉकेट विज्ञान सीखा एवं अन्तरिक्ष अन्वेषण के क्षेत्र में क्रान्ति ला दी।

उत्कृष्टता प्राप्त करने के उपाय

– नवीनतम तकनीकों एवं कौशलों को सीखने की प्रवृत्ति विकसित करें।

– पाठ्यक्रमीय शिक्षा के साथ-साथ स्वयं अध्ययन करें।

– विभिन्न क्षेत्रों में दक्षता प्राप्त कर अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार करें।

– आत्मनिर्भरता एवं उद्यमशीलता को अपनाएँ।

४. सामाजिक अपेक्षाएँ एवं आत्म-परिचय का संघर्ष

वैश्वीकरण एवं बदलते सामाजिक मूल्यों के कारण अनेक युवा अपनी पहचान को लेकर भ्रमित रहते हैं। सामाजिक मानकों पर खरा उतरने का दबाव उनके आत्मविश्वास को प्रभावित करता है।

प्रेरणादायक उदाहरण : ओपरा विन्फ्रे, जिन्होंने नस्लीय भेदभाव एवं सामाजिक चुनौतियों का सामना करते हुए अपनी मौलिकता बनाए रखी एवं विश्वभर में प्रमुख मीडिया व्यक्तित्व के रूप में उभरकर सामने आईं।

उत्कृष्टता प्राप्त करने के उपाय

– आत्मनिरीक्षण द्वारा अपने मूल्यों एवं रुचियों को समझें।

– सकारात्मक एवं प्रेरणादायक व्यक्तियों के साथ रहें।

– अपनी अभिरुचि के अनुसार कार्य करने का प्रयास करें।

– असफलताओं को अनुभव मानकर उनसे सीखें।

चुनौतियों का सामना करते हुए जीवन में उत्कृष्टता प्राप्त करने के सिद्धान्त

१. सहनशीलता एवं अनुकूलनशीलता का विकास करें। संकट का सामना करने की क्षमता ही सफलता का मार्ग प्रशस्त करती है।

२. भावनात्मक बुद्धिमत्ता को अपनाएँ। संवेदनशीलता एवं आत्मनियंत्रण जीवन में स्थायित्व प्रदान करते हैं।

३. सतत स्व-अध्ययन करें। ज्ञानार्जन को जीवन का अविभाज्य अंग बनाना चाहिए।

प्रेरणादायक उदाहरण : वॉरेन बफेट, जो प्रतिदिन अपने समय का ८० प्रतशित भाग अध्ययन में व्यतीत करते हैं। वे एक अमेरिकी व्यवसायी, निवेशक और परोपकारी व्यक्ति हैं, जो वर्तमान में बर्कशायर हैथवे के सह-संस्थापक, अध्यक्ष और सीईओ के रूप में कार्य करते हैं। अपनी निवेश सफलता के परिणामस्वरूप, बफेट दुनिया के सबसे प्रसिद्ध निवेशकों में से एक हैं।

४. अनुशासन एवं कठोर परिश्रम को अपनाएँ। संगठित जीवनशैली ही उत्कृष्टता की कुंजी है।

प्रेरणादायक उदाहरण : सेरेना विलियम्स, जिन्होंने कठोर परिश्रम से टेनिस जगत् में उच्च स्थान प्राप्त किया।

५. लक्ष्य एवं उद्देश्य स्पष्ट रखें। सार्थक जीवन के लिए आत्म-ज्ञान एवं उद्देश्यों की स्पष्टता आवश्यक है।

६. **मूल्यों और नवाचार के प्रतीक रतन टाटा** ने टाटा समूह के नेतृत्व काल में वैश्विक प्रतिस्पर्धा और आर्थिक चुनौती का सामना किया। उन्होंने टाटा समूह को विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित ब्राण्ड बनाया। रतन टाटा ने नैतिकता और नवाचार को प्राथमिकता दी। उन्होंने 'नैनो कार' जैसी क्रान्तिकारी परियोजनाएँ शुरू कीं और कठिन परिस्थितियों में भी भारतीय मूल्यों को बनाए रखा।

प्रेरणाः सफलता केवल लाभ अर्जित करने में नहीं, बल्कि समाज को सशक्त, सबल और अच्छा बनाने में भी है। नैतिकता और परिश्रम से दीर्घकालिक सफलता प्राप्त की जा सकती है।

७. सूचना का अधिकार (RTI) आन्दोलन की नेतृत्वकर्ता, अरुणा रॉय ने मजदूरों और गरीब किसानों को उनके अधिकार दिलाने के लिए कई आन्दोलन चलाए। उन्होंने सूचना का अधिकार (RTI) कानून लागू कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे साधारण नागरिकों को सरकारी कार्यों में पारदर्शिता मिली।

प्रेरणा : यदि आप अन्याय के खिलाफ खड़े होते हैं, तो आप समाज में बदलाव ला सकते हैं। जनता को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करना ही सच्ची सेवा है।

८. आईटी क्रान्ति के जनक नन्दन नीलेकणी ने भारत में डिजिटल तकनीक और आधार जैसी क्रान्ति को स्थापित किया। वे इनफोसिस के सह-संस्थापक और आधार प्रणाली के सफल निर्माता बने। नन्दन नीलेकणी ने भारतीय आईटी उद्योग को वैश्विक पहचान दिलाई और आधार जैसी डिजिटल प्रणाली की नींव रखी, जिससे करोड़ों लोगों को लाभ मिला।

उपसंहार : चुनौतियों को अवसर में बदलें। यद्यपि आधुनिक युवा अनेक कठिनाइयों से घिरे हुए हैं, तथापि समर्पण, सतत शिक्षा एवं आत्म-अनुशासन द्वारा वे इन बाधाओं को पार कर सकते हैं।

नेल्सन मण्डेला का यह कथन सदैव स्मरणीय है : **जीवन की महानतम गौरवशाली उपलब्धि यह नहीं कि हम कभी न गिरें, अपितु हर बार गिरकर पुनः उठ खड़े हों।** ○○○

भजन एवं कविता

जयतु जयतु जय जगन्नाथ प्रभु

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा, रायपुर

जयतु जयतु जय जगन्नाथ प्रभु, दयासिन्धु हे कृपानिधान।
सकल जगत भूषणस्वरूप तुम, करो जगतजन का कल्यान।।
ब्रह्मा शिव गणेश से पूजित, शास्त्र करें तव महिमागान ।
खिले पद्मसम तव मुख सुन्दर, करता नित आनन्द-वितान।।
रथारूढ़ हो पथ पर आते, दिव्य भाव में विराजमान ।
रथयात्रा का पुन्यपर्व यह, करता भक्ति भाव उत्थान ।।
मध्य सुभद्रा बलदाऊ सह, होते अतिशय शोभावान।
भक्तजनों के सिद्धिप्रदाता, मेरे जगन्नाथ भगवान् ।।
यश-वैभव की नहीं कामना, नहीं राजसुख–भोग महान।
रहो कृपामय जगन्नाथ प्रभु, तुमसे चाहूँ यह वरदान ।।

गंगा-महिमा

डॉ. अनिल कुमार 'फतेहपुरी', गया, बिहार

सदियों से बह रहा है निर्मल तुम्हारा पानी,
युग-युग से आ रही है गंगा तेरी कहानी ।

अब तक न जाने माते कितनो को तूने तारे,
भव-रोग-शोक-दुःख से तूने उन्हें उबारे।
हिमगिरि की गोद से तू लेकर चली जवानी,
युग-युग से आ रही है गंगा तेरी कहानी ।।

ऋषि-शाप से जले जब नृप के हजारो बेटे,
तब पाप मेटने को नृप द्वार तेरे लेटे।
तप से तुम्हें यहाँ तक लाने की मन में ठानी,
युग-युग से आ रही है गंगा तेरी कहानी ।।

राजा ने घोर तप से माता तुम्हें जगाया,
कर-कंज शीश पर रख तूने उन्हें उठाया।
होकर प्रसन्न तूने तब बात उनकी मानी,
युग-युग से आ रही है गंगा तेरी कहानी।।

कलि-मल-हरण को माता संसार में पधारी,
तज देवलोक सुन्दर पग को धरा पे धारी ।
सब हैं कृतार्थ तुमसे राजा-गरीब-दानी,
युग-युग से आ रही है गंगा तेरी कहानी।।

अब मैं हारा हे भगवन्!

बाबूलाल परमार

अब मैं हारा हे भगवन्! कर के विनती मन ही मन ।
समर्पित सब कुछ हे भगवन्! जीवन तन-मन-धन।।
हे भगवन्! कोई नहीं अपना, लगा के देखा सबमें मन।
देखा उनमें स्वार्थ का रिश्ता, न देखा कहीं प्रेमी मन ।।
हे भगवन्! जिसने भी पुकारा, उसमें था करुणा का मन।
इसके अलावा कुछ भी न था, पुकारा मन ही मन ।।
हे भगवन्! एक तुम ही हो, इस जग के जीवन-धन ।
जप में, तप में, ध्यान-भजन में, तुम्हें पुकारा हे भगवन् ।।
हे भगवन्! मैं हिम्मत हारा, तन-मन उपजा कम्पन्न ।
बाबूलाल का करुण क्रन्दन, सुन लो विनती हे भगवन्।।

अध्यात्म और सतत विकास में सन्तुलन चाहिये

श्री नरेन्द्र मोदी, प्रधानमन्त्री, भारत सरकार

(यह व्याख्यान भारत के प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने रामकृष्ण मठ, अहमदाबाद के मन्दिर उद्घाटन के उपलक्ष्य में दिनांक ९ दिसम्बर, २०२४ को ऑनलाइन दिया था। – सं.)

रामकृष्ण मठ, लेखम्बा, अहमदाबाद

परम श्रद्धेय श्रीमत् स्वामी गौतमानन्द जी महाराज, देश-विदेश से आए रामकृष्ण मठ और मिशन के पूज्य सन्तगण, गुजरात के मुख्यमन्त्री श्रीमान भूपेन्द्र भाई पटेल, इस कार्यक्रम से जुड़े अन्य सभी महानुभाव, देवियो और सज्जनो, नमस्कार !

गुजरात का बेटा होने के नाते मैं आप सभी का इस कार्यक्रम में स्वागत करता हूँ, अभिनन्दन करता हूँ। मैं माँ सारदा, गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द जी के श्रीचरणों में प्रणाम करता हूँ। आज का यह कार्यक्रम श्रीमत् स्वामी प्रेमानन्द महाराज जी की जयन्ती के दिन आयोजित हो रहा है। मैं उनके चरणों में भी प्रणाम करता हूँ।

साथियो ! महान विभूतियों की ऊर्जा सदियों तक संसार में सकारात्मक सृजन को विस्तार देती रहती है। इसीलिए आज स्वामी प्रेमानन्द महाराज की जयन्ती के दिन हम इतने पवित्र कार्य के साक्षी बन रहे हैं। लेखम्बा में नवनिर्मित प्रार्थना सभागृह और साधु-निवास का निर्माण भारत की सन्त परम्परा का पोषण करेगा। यहाँ से सेवा और शिक्षा की एक ऐसी यात्रा प्रारम्भ हो रही है, जिसका लाभ आनेवाली कई पीढ़ियों को मिलेगा। श्रीरामकृष्ण देव का मन्दिर, गरीब छात्रों के लिये हॉस्टल, वोकेशनल ट्रेनिंग सेन्टर, अस्पताल और यात्री-निवास, ये कार्य अध्यात्म के प्रसार और मानवता की सेवा के माध्यम बनेंगे। एक तरह से गुजरात में मुझे दूसरा घर भी मिल गया है। वैसे भी सन्तों के बीच, आध्यात्मिक वातावरण में मेरा मन खूब रमता भी है। मैं आप सभी को इस अवसर पर बधाई देता हूँ, अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करता हूँ।

सानन्द क्षेत्र से हमारी कितनी ही यादें भी जुड़ी हैं। इस कार्यक्रम में मेरे कई पुराने मित्र और आध्यात्मिक बन्धु भी हैं। आपमें से कई साथियों के साथ मैंने यहाँ जीवन का कितना समय गुजारा है, कितने ही घरों में रहा हूँ, कई परिवारों में माताओं-बहनों के हाथ का खाना खाया है, उनके सुख-दुख में सहभागी रहा हूँ। मेरे वे मित्र जानते होंगे। हमने इस क्षेत्र का, यहाँ के लोगों का कितना संघर्ष देखा है। इस क्षेत्र को जिस आर्थिक विकास की आवश्यकता थी, आज उसे हम होते हुये देख रहे हैं। मुझे पुरानी बातें याद हैं कि पहले बस से जाना होता, तो एक सुबह में बस आती थी और एक शाम को बस आती थी। इसलिये अधिकांश लोग साईकिल से जाना पसन्द करते थे। इसलिए इस क्षेत्र को मैं अच्छी तरह से पहचानता हूँ। इसके चप्पे-चप्पे से मेरा नाता जुड़ा हुआ है। मैं मानता हूँ, इसमें हमारे प्रयासों और नीतियों के साथ-साथ आप संतों के आशीर्वाद की भी बड़ी भूमिका है। अब समय बदला है, तो समाज की आवश्यकता भी बदली है। अब तो मैं चाहूँगा, हमारा यह क्षेत्र आर्थिक विकास के साथ-साथ आध्यात्मिक विकास का भी केन्द्र बने। क्योंकि सन्तुलित जीवन के लिए अर्थ के साथ अध्यात्म का होना उतना ही आवश्यक है। मुझे खुशी है, हमारे सन्तों और मनीषियों के मार्गदर्शन में सानन्द और गुजरात इस दिशा में आगे बढ़ रहा है।

साथियो, किसी वृक्ष के फल की, उसके सामर्थ्य की पहचान उसके बीज से होती है। रामकृष्ण मठ वह वृक्ष है, जिसके बीज में स्वामी विवेकानन्द जैसे महान तपस्वी की अनन्त ऊर्जा समाहित है। इसलिए इसका सतत विस्तार, इससे मानवता को मिलने वाली छाया अनन्त है, असीमित है। रामकृष्ण मठ के मूल में जो विचार है, उसे जानने के

लिए स्वामी विवेकानन्द को जानना बहुत आवश्यक है। इतना ही नहीं, उनके विचारों को जीना पड़ता है। जब आप उन विचारों को जीना सीख जाते हैं, तो किस तरह एक अलग प्रकाश आपका मार्गदर्शन करता है, मैंने स्वयं इसे अनुभव किया है। पुराने सन्त जानते हैं, रामकृष्ण मिशन ने, रामकृष्ण मिशन के संतों ने और स्वामी विवेकानन्द के चिन्तन ने कैसे मेरे जीवन को दिशा दी है। इसलिए मुझे जब भी अवसर मिलता है, मैं अपने इस परिवार के बीच आने का, आपसे जुड़ने का प्रयास करता हूँ। सन्तों के आशीर्वाद से मैं मिशन से जुड़े कई कार्यों में निमित्त भी बनता रहा हूँ। २००५ में मुझे वडोदरा के दिलाराम बंगलो को रामकृष्ण मिशन को सौंपने का सौभाग्य मिला था। यहाँ स्वामी विवेकानन्द जी ने कुछ समय बिताया था और मेरा सौभाग्य है कि पूज्य स्वामी आत्मस्थानन्द जी स्वयं उपस्थित हुए थे, क्योंकि मुझे उनकी उंगली पकड़कर के चलना-सीखने का अवसर मिला था, आध्यात्मिक यात्रा में मुझे उनका संबल मिला था। मेरा यह सौभाग्य था कि मैंने उनके हाथों में बंगलो के दस्तावेज सौंपे थे। उस समय से और उनके जीवन के अन्तिम पल तक मुझे स्वामी आत्मस्थानन्द जी का निरन्तर स्नेह मिलता रहा है। उनका प्यार और आशीर्वाद मेरे जीवन की एक बहुत बड़ी पूँजी है ।

साथियो ! समय-समय पर मुझे मिशन के कार्यक्रमों और आयोजनों का हिस्सा बनने का सौभाग्य मिलता रहा है। आज विश्वभर में रामकृष्ण मिशन के २८० से अधिक शाखा-केन्द्र हैं। भारत में रामकृष्ण-भावधारा से जुड़े लगभग १२०० आश्रम-केन्द्र हैं, जो आश्रम, मानव सेवा के संकल्प के अधिष्ठान बनकर काम कर रहे हैं। गुजरात तो बहुत पहले से रामकृष्ण मिशन के सेवाकार्यों का साक्षी रहा है। शायद पिछले कई दशकों में गुजरात में कोई भी संकट आया हो, रामकृष्ण मिशन हमेशा आपको खड़ा हुआ मिलेगा, काम करता हुआ मिलेगा। सारी बातें याद करने जाऊँगा, तो बहुत लम्बा समय निकल जाएगा। लेकिन आपको याद होगा, सूरत में आई बाढ़ का समय हो, मोरबी में बाँध हादसे के बाद की घटनाएँ हों, भुज में भूकम्प के बाद तबाही के बाद के दिन हों, अकाल का कालखंड हो, अतिवृष्टि का कालखंड हो, जब-जब गुजरात में आपदा आई है, रामकृष्ण मिशन से जुड़े लोगों ने आगे बढ़कर पीड़ितों का हाथ थामा है। भूकम्प से त्रस्त हुए ८० से अधिक स्कूलों को फिर से बनाने में रामकृष्ण मिशन ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। गुजरात के लोग आज भी उस सेवा को याद करते हैं, उससे प्रेरणा भी लेते हैं।

साथियो ! स्वामी विवेकानन्द जी का गुजरात से एक अलग आत्मीय सम्बन्ध रहा है। उनकी जीवन-यात्रा में गुजरात की बड़ी भूमिका रही है। स्वामी विवेकानन्द जी ने गुजरात के कई स्थानों का भ्रमण किया था। गुजरात में ही स्वामीजी को सबसे पहले शिकागो विश्वधर्म महासभा के बारे में जानकारी मिली थी। यहीं पर उन्होंने कई शास्त्रों का गहन अध्ययन कर वेदान्त के प्रचार के लिये अपने आप को तैयार किया था। १८९१ के दौरान स्वामीजी पोरबन्दर के भोजेश्वर भवन में कई महीने रहे थे। गुजरात सरकार ने यह भवन भी स्मृति-मन्दिर बनाने के लिए रामकृष्ण मिशन को समर्पित कर दिया। आपको याद होगा, गुजरात सरकार ने स्वामी विवेकानन्द की १५०वीं जयन्ती २०१२ से २०१४ तक मनायी थी। इसका समापन समारोह गाँधीनगर के महात्मा मन्दिर में बड़े उत्साहपूर्वक मनाया गया था। इसमें देश-विदेश के हजारों प्रतिभागी शामिल हुए थे। मुझे संतोष है कि गुजरात से स्वामीजी के सम्बन्धों की स्मृति में अब गुजरात सरकार स्वामी विवेकानन्द टूरिस्ट सर्किट के निर्माण की रूपरेखा तैयार कर रही है।

भाईयो और बहनो, स्वामी विवेकानन्द आधुनिक विज्ञान के बहुत बड़े समर्थक थे। स्वामीजी कहते थे – विज्ञान का महत्त्व केवल चीजों या घटनाओं के वर्णन तक नहीं है, बल्कि विज्ञान का महत्त्व हमें प्रेरित करने और आगे बढ़ाने में है। आज आधुनिक तकनीकी के क्षेत्र में भारत की बढ़ती धमक, विश्व के तीसरे सबसे बड़े स्टार्टअप इकोसिस्टम के रूप में भारत की नई पहचान, विश्व की तीसरी सबसे बड़ी इकोनोमी बनने की ओर बढ़ते कदम, इन्फ्रास्ट्रक्चर के क्षेत्र में हो रहे आधुनिक निर्माण, भारत के द्वारा दिये जा रहे वैश्विक चुनौतियों के समाधान, आज का भारत अपनी ज्ञान-परम्परा को आधार बनाते हुए, अपनी सदियों पुरानी शिक्षाओं को आधार बनाते हुए, आज हमारा भारत तेज गति से आगे बढ़ रहा है। स्वामी विवेकानन्द मानते थे कि युवाशक्ति ही राष्ट्र की रीढ़ होती है। स्वामीजी का वह कथन, वह आह्वान, जिसमें उन्होंने कहा था – ''मुझे आत्मविश्वास और ऊर्जा से भरे १०० युवा दे दो, मैं भारत का कायाकल्प कर दूँगा''।

अब समय है, हम वह दायित्व लें। आज हम अमृतकाल की नई यात्रा प्रारम्भ कर चुके हैं। हमने विकसित भारत का अमोघ संकल्प लिया है। हमें इसे निश्चित समय-सीमा में पूरा करना है।

आज भारत विश्व का सबसे युवा राष्ट्र है। आज भारत का युवा विश्व में अपनी क्षमता और सामर्थ्य को प्रमाणित कर चुका है। यह भारत की युवाशक्ति ही है, जो आज विश्व की बड़ी-बड़ी कम्पनियों का नेतृत्व कर रही है। यह भारत की युवा शक्ति ही है, जिसने भारत के विकास की कमान सँभाली हुई है। आज देश के पास समय भी है, संयोग भी है, स्वप्न भी है, संकल्प भी है और अगाध पुरुषार्थ की संकल्प से सिद्धि की यात्रा भी है। इसलिए हमें राष्ट्र-निर्माण के हर क्षेत्र में नेतृत्व के लिये युवाओं को तैयार करने की आवश्यकता है। आज आवश्यकता है, टेक्नोलॉजी और दूसरे क्षेत्रों की तरह ही हमारे युवा राजनीति में भी देश का नेतृत्व करें। अब हम राजनीति को केवल परिवार-वादियों के लिये नहीं छोड़ सकते, हम राजनीति को अपने परिवार की जागीर वालों के हवाले नहीं कर सकते। इसलिए हम नए वर्ष २०२५ में एक नई शुरूआत करने जा रहे हैं। १२ जनवरी, २०२५ को स्वामी विवेकानन्द जी की जयन्ती पर युवा दिवस के अवसर पर दिल्ली में 'यंग लिडर डायलॉग' का आयोजन होगा। इसमें देश से २ हजार चयनित, युवाओं को बुलाया जाएगा। करोड़ों अन्य युवा देशभर से टेक्नोलॉजी से इसमें जुड़ेंगे। युवाओं के दृष्टिकोण से विकसित भारत के संकल्प पर चर्चा होगी। युवाओं को राजनीति से जोड़ने के लिए रोडमैप बनाया जाएगा। हमारा संकल्प है, हम आनेवाले समय में एक लाख प्रतिभाशाली और ऊर्जावान युवाओं को राजनीति में लाएँगे और ये युवा २१वीं सदी के भारत की राजनीति का नया चेहरा बनेंगे, देश का भविष्य बनेंगे।

साथियो, आज के इस पावन अवसर पर, धरती को बेहतर बनाने वाले २ महत्त्वपूर्ण विचारों को याद करना भी आवश्यक है। आध्यात्मिकता और स्थायी विकास इन दोनों विचारों में सामंजस्य बिठाकर हम एक बेहतर भविष्य का निर्माण कर सकते हैं। स्वामी विवेकानन्द आध्यात्मिकता के व्यावहारिक पक्ष पर जोर देते थे। वे ऐसी आध्यात्मिकता चाहते थे, जो समाज की जरूरतें पूरी कर सके। वे विचारों की शुद्धि के साथ-साथ अपने आसपास स्वच्छता रखने पर भी जोर देते थे। आर्थिक विकास, समाज कल्याण और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बिठाकर स्थायी विकास का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। स्वामी विवेकानन्द जी के विचार इस लक्ष्य तक पहुँचने में हमारा मार्गदर्शन करेंगे। हम जानते हैं, अध्यात्म और सतत विकास दोनों में

ही सन्तुलन का महत्त्व है। एक मन के अंदर संतुलन पैदा करता है, तो दूसरा हमें प्रकृति के साथ संतुलन बिठाना सिखाता है। इसलिए मैं मानता हूँ कि रामकृष्ण मिशन जैसे संस्थान हमारे अभियानों को गति देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। मिशन लाइफ हो, एक पेड़ माँ के नाम जैसे अभियान हो, रामकृष्ण मिशन के द्वारा इन्हें और विस्तार दिया जा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द भारत को सशक्त और आत्मनिर्भर देश के रूप में देखना चाहते थे। उनके स्वप्न को साकार करने की दिशा में देश अब आगे बढ़ चुका है। यह स्वप्न शीघ्र ही पूरा हो, सशक्त और समर्थ भारत एक बार फिर मानवता को दिशा दे, इसके लिए हर देशवासी को गुरुदेव रामकृष्ण परमहंस और स्वामी विवेकानन्द जी के विचारों को आत्मसात् करना होगा। इस तरह के कार्यक्रम, सन्तों के प्रयास इसके बहुत बड़े माध्यम हैं। मैं एक बार फिर आज के आयोजन के लिए आपको बधाई देता हूँ। सभी पूज्य सन्तगण को श्रद्धापूर्वक नमन करता हूँ और स्वामी विवेकानन्द जी के स्वप्न को साकार करने में आज की यह नई शुरूआत, नई ऊर्जा बनेगी, इसी अपेक्षा के साथ आप सबका बहुत-बहुत धन्यवाद। ○○○

प्रश्नोपनिषद् (६०)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुन: स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

भाष्य – शास्त्र-प्रणयनाद्-उपपत्तिं च आह अन्यत्र परमार्थ-वस्तु-स्वरूपाद्-अविद्या-विषये; ''यत्र हि द्वैतमिव भवति'' (बृ.उ. २/४/१४) इत्यादि विस्तरतः वाजसनेयके।

भाष्यार्थ – अन्यत्र, अविद्या के प्रसंग में वाजसनेयक (बृहदारण्यक श्रुति) के द्वारा 'जिस अवस्था में द्वैत के समान हो जाता है' आदि के माध्यम से परमार्थ वस्तु के रूप में, विस्तारपूर्वक शास्त्र-रचना की सार्थकता भी बताई गई है।

भाष्य – अत्र च विभक्ते विद्या-अविद्ये परा-अपरे इत्यादौ एव शास्त्रस्य। अतो न तार्किकवाद-भट-प्रवेशो वेदान्तराज-प्रमाण-बाहु-गुप्त इह आत्म-एकत्व-विषय इति।

भाष्यार्थ – यहाँ (अथर्ववेदीय मुण्डकोपनिषत् के आरम्भ में) शास्त्र का परा और अपरा के रूप में विद्या तथा अविद्या का विभाजन किया गया है। अत: वेदान्त रूपी राजा की प्रमाणरूपी बाहुओं द्वारा रक्षित इस आत्म-एकत्व के राज्य में तार्किकवाद-रूपी सेना प्रवेश नहीं कर सकती।

भाष्य – एतेन अविद्याकृत-नाम-रूपादि-उपाधिकृत-अनेक-शक्ति-साधनकृत-भेदवत्-त्वाद्-ब्रह्मणः सृष्टि-आदि-कर्तृत्वे साधन-आदि-अभावो दोषः प्रत्युक्तो वेदितव्यः परैः उक्त आत्म-अनर्थ-कर्तृत्व-आदि-दोषः च।

भाष्यार्थ – इस (परा-अपरा) विभाग के द्वारा अविद्याकृत नाम-रूप आदि उपाधि के कारण ब्रह्म के अनेक शक्ति और साधनजनित भेदों से युक्त होने से, अन्य तार्किकों द्वारा ब्रह्म का सृष्टि आदि के कर्तृत्व में साधन आदि के अभाव-रूपी दोष और अपने ही अनर्थ का कर्ता होने का दोष भी खण्डित हुआ समझना चाहिए।

भाष्य – यः तु दृष्टान्तः राज्ञः सर्वार्थ-कारिणि कर्तरि भृत्ये उपचारात् राजा कर्ता-इति सः अत्र-अनुपपन्नः 'स ईक्षांचक्रे' इति श्रुतेः मुख्य-अर्थ-बाधनात् प्रमाण-भूतायाः।

भाष्य – तुमने जो दृष्टान्त दिया कि राजा का सारा कार्य करनेवाले भृत्य (मंत्री) को ही औपचारिक रूप से 'राजा' या 'कर्ता' कहा जाता है; वह यहाँ सार्थक नहीं है, क्योंकि यह 'स ईक्षांचक्रे' इस प्रमाणभूत श्रुति के मुख्य अर्थ का बाधन करता है।

भाष्य – तत्र हि गौणी कल्पना शब्दस्य यत्र मुख्य-अर्थो न सम्भवति। इह तु अचेतनस्य मुक्त-बद्ध-पुरुष-विशेष-अपेक्षया कर्तृ-कर्म-देश-काल-निमित्त-अपेक्षया च बन्ध-मोक्ष-आदि-फलार्था नियता पुरुषं प्रति प्रवृत्तिः न उपपद्यते। यथा-उक्त-सर्वज्ञ-ईश्वर-कर्तृत्वपक्षे तु उपपन्ना।।३।।

भाष्यार्थ – जहाँ शब्द का मुख्य अर्थ लेना सम्भव नहीं होता, वहीं उसके गौण अर्थ की कल्पना की जाती है। यहाँ, इस प्रकरण में, मुक्त-बद्ध विशेष पुरुष की अपेक्षा से और कर्ता, कर्म, देश, काल तथा निमित्त की अपेक्षा से; पुरुष के प्रति अचेतन प्रधान (प्रकृति) की नियमित प्रवृत्ति सम्भव नहीं है। पूर्वकथित सर्वज्ञ ईश्वर को कर्ता मानने के पक्ष में तो यह सार्थक ही है।।३।। **(क्रमशः)**

मनुष्य का अपना बन्धन अपने ही हाथ में है, अपनी मुक्ति भी अपने ही हाथ में है। हम लोग जान-बुझकर गड्ढे और बन्धन में पड़ते हैं और हजार कष्ट भोगते हैं।

– स्वामी विरजानन्द जी महाराज

गंगा – हम तो चलते ही जायेंगे

स्वामी मैथिलीशरण

अध्यक्ष, रामकिंकर विचार मिशन, ऋषिकेश

गंगा यदि हर पत्थर को व्यवधान माने, तो वह सागर तक कभी नहीं पहुँच पायेगी। प्रवाह उसको या तो बायें कर देता है या दायें, कभी ऊपर से भी निकल जाता है। हर व्यवधान हमें गति और दिशा देता है, क्योंकि व्यवधान का नाम जड़ है, प्रवाह तो चैतन्य स्वरूप ही है। जब हम समुद्र बन जायेंगे, तब फिर बादल हमको उठा लेंगे और हम फिर मेघ बनकर बरसेंगे और फिर हम पुन: इसी मार्ग पर आयेंगे और ये पत्थर फिर से व्यवधान बनेंगे और यहीं मिलेंगे, ये कभी आगे नहीं बढ़ेंगे। क्योंकि ये न तो हमारी मिठास के रसिक हैं, न ही शीतलता के, न ही गहराई के और पवित्रता से तो इनका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। लोक-रंजन हमारा उद्देश्य ही नहीं है –

दीपक चाहे कोई जलाये, कोई नित्य आरती गाये,
फूल चढ़ाये, दूध चढ़ाये, स्तुति चाहे रोज सुनाये,
पतित पावन कहें भले ही, डुबकी भी कोई नित्य लगाये,
चरैवेति है मंत्र हमारा, हम तो चलते ही जायेंगे,
बादल बनकर फिर आयेंगे।
राम हमारा अवलम्बन हैं, सीता है आराध्य हमारी,
कालिंदी को भी ले लेंगे, बनकर संगम और चलेंगे,
पत्थर तो सब यहीं रहेंगे, हम तो सागर बन जायेंगे।

जीवन और उपलब्धियों के निरन्तर चलते जाने में ही पवित्रता और धन्यता बनी रहती है। रुक जाना तो हार जाना है। जो हमारी संस्कृति का कोई भाग ही नहीं है। हम दिशा बदल सकते हैं, परन्तु लक्ष्य नहीं बदल सकते। हर दिशा में, हर दशा में अद्वैत ही तो हमारा लक्ष्य है, जो अनन्त है। आकाश के रूप में अनन्त हमारे साथ सदा सर्वदा है। समुद्र के रूप में अनन्त हमारा अपना है, देश के प्रत्येक विद्यार्थी को चलते जाना है। विद्या-ग्रहण के साथ-साथ अविद्या को त्यागना भी है, नहीं तो लक्ष्य तो मिलेगा नहीं, हमारे पुरुषार्थ का सीमित जल भी सूख जायेगा और हम अपने उद्यम की एक बूँद का भी उपयोग जनसेवा में नहीं कर सकेंगे।

भगवान कृष्ण ने केवल मुरली नहीं बजाई, शंख बजाना भी वे बेहतर तरीके से जानते हैं, परन्तु शंख बजाते समय मुरली को कहीं छोड़ नहीं देते हैं, अपितु उसे भी कमर के फेंटे में लगाये रखते हैं, माने पुन: मधुरता की सम्भावना को छोड़ नहीं देते हैं। व्रज से द्वारिका और अयोध्या से लंका ये जीवन का सत्य है, बढ़ते चलो। यही राम-कृष्ण की एकरूपता है। ○○○

श्रीरामकृष्ण-स्तुति- २

– रामकुमार गौड़, वाराणसी

तर्ज – (भए प्रगट कृपाला, दीनदयाला...)

बिनु जगदाधारा, जगत् असारा, देख सबहिं समझाया ।
करि हरिपद प्रीती, चलि श्रुतिरीती, करो धन्य नरकाया।
जे प्रिय सुरसरिता, कर नरचरिता, जदपि सच्चिदानन्दा।
सो प्रभु निज दासा, जानि दुराशा, हरो सकल सुखकन्दा।।१७।।

जय करुणासागर, उपमा-नागर, उपदेशामृत-धारा ।
अद्भुत गुणकारी, कलिमलहारी, भव-कुरोग-उपचारा।
कर मतिगति-निर्मल, वचन-सुधाजल, भक्ति पाइ सुखसारा।
जन सुखद कुटीरा, गतश्रमपीरा, करै मनुष्य विहारा ।।१८।।

कलि कल्मषहारी, तनि-छवि न्यारी, देखत हे सुखराशी।
निज सहज स्वरूपा, अमल-अनूपा, पावै नर अविनाशी
प्रभु पावन नामा, जपि अविरामा, शुद्ध होंहिं अघराशी ।
प्रभु लीला-स्थाना, गुणगण-गाना, मुक्ति-हेतु ज्यों काशी ।।१९।।

जय जय जनपालक, षडरिपुघालक, आध्यात्मिक सुखदाता।
करि कृपा अकारन, जगहित कारन, धर्यो देह जनत्राता।
निज भाव सम्पदा, से जनविपदा, हरण हेतु पितु-माता ।
करो कृपा दृष्टि, शुभभक्ति-वृष्टि, रहे दास सदा गुण गाता ।।२०।।

श्रीरामकृष्ण-गीता (४७)

(नवम अध्याय ९/१)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

नवम अध्याय

श्रीरामकृष्ण उवाच

यद्वदाम्रफलादीनि चाखण्डानि हि केवलम्।
योग्यानि देवपूजायै तथैव सर्वकर्मणे।।१।।

– श्रीरामकृष्ण ने कहा – जिस प्रकार आम, अमरूद आदि शुद्ध फल ही देव-पूजा में और सभी कार्यों में लगा सकते हैं।

देवेभ्यो नैव युज्यन्ते काकदुष्टानि तानि चेत्।
द्विजाय च न दातव्यं भोक्तव्यं नापि चात्मना।।२।।

– किन्तु यदि उसे कौवा चोंच से काट दिया हो, तो वह देवता को भोग नहीं लगाया जा सकता, ब्राह्मण को दान भी नहीं किया जा सकता और अपने भी नहीं खाना चाहिये।

तथा सदैव यूनश्च बालकान् शुद्धचेतसः।
तान् प्रचोदयितुं सर्वांश्चेष्टते धर्मवर्त्मनि।।३।।

– उसी प्रकार सभी पवित्रहृदय-बालकों और युवकों को धर्ममार्ग पर ले जाने के लिये सारा प्रयास करना चाहिये।

नैव स्पृष्टानि चित्राणि तेषां विषयबुद्धिभिः।
तैर्मनश्चेत् सकृद् दृष्टं परमार्थः सुदुर्गमः।।४।।

– क्योंकि उनके मन में विषय-भावना का तनिक भी प्रवेश नहीं हुआ है। एक बार भी विषय-भाव के प्रवेश करने से परमार्थ पथ पर ले जाना अत्यन्त कठिन है।

अथ विद्धि किमर्थं म इदृशो बालकाः प्रियाः।
यत् षोडशकलायत्तमानसाः शैशवे हि ते।।५।।

– मैं बच्चों को इतना प्रेम क्यों करता हूँ, जानते हो? क्योंकि बचपन में उनका मन सोलह आना (शत प्रतिशत) उनके पास ही रहता है। **(क्रमशः)**

नीतिविमर्शः

डॉ. सत्येन्दु शर्मा, रायपुर

ब्रह्मणा नैतिकं यन्त्रं सृष्ट्वा यत् परिदर्शितम्।
आरूढा प्रकृतिः तत्तु संचरति प्रतिक्षणम्।।

– ब्रह्म ने जिस स्वचालित नैतिक यन्त्र की सृष्टि करके दिखला दिया, उसी यन्त्र पर आरूढ़ होकर प्रकृति प्रतिक्षण संचरण करती रहती है।

नीतियन्त्रसमारूढ़ा नृत्यति प्रकृतिर्ध्रुवम्।
नैतिकभ्रंश एतस्या भाविनाशस्य सूचकम्।।

– नीति रूपी यन्त्र पर सवार होकर ही यह प्रकृति सदा संसरणशील बनी रहती है। नीति-सम्बन्ध से च्युत होना इसके भावी विनाश का सूचक होता है।

उक्तं श्रुतौ स्मृतौ यद्धि सैव नीतिरुदीरिता।
तद्नीतियानमारुह्य सद्भिः तीर्णं भवार्णवम्।।

– वेदों और धर्मशास्त्रों में जो आचरणीय आदेश, वचन कहे गये हैं, विद्वानों ने उसे ही नीति की संज्ञा दी है। उसी नीति के यान में सवार होकर सन्तों ने संसार-सागर पार किया है।

या सन्नयति सा नीतिराचारस्य प्रदर्शिका।
सत्पथो लुप्यते यत्र साऽनीतिरभिधीयते।।

– जो सत् (ब्रह्म) तक ले जानेवाली है, उसके अनुकूल आचरण दिखानेवाली हो, उसे नीति कहते हैं। जहाँ सत्-प्राप्ति का पथ लुप्त हो जाता है, उसे अनीति कहते हैं।

उत्सृज्य नैतिकं धर्मं मूढा दुर्गतिपारगाः।
इह परत्र सिद्ध्यन्ति नरा नीतिपरायणाः।।

– नैतिक धर्म को छोड़कर मूढ़जन चरम दुर्गति को पहुँच जाते हैं और नीतिपरायण लोग इहलोक तथा परलोक, दोनों जगह सफलता प्राप्त करते हैं।

जीवनस्येह साफल्यं नीतौ सर्वं समाहितम्।
प्राज्ञस्तु श्रेयसीं नीतिं सर्वथैव समाचरेत्।।

– जीवन की सारी सफलता नीति में ही समाहित है। इसलिए बुद्धिमानों को हर तरह से कल्याणकारी नीति का आश्रय ग्रहण करना चाहिए। ○○○

स्वामी ब्रह्मानन्द और भुवनेश्वर

स्वामी तन्निष्ठानन्द

रामकृष्ण मठ, नागपुर

(गतांक से आगे)

स्वामी अशोकानन्द ने अपने संस्मरणों में एक घटना का वर्णन किया है – मद्रास से स्वामी शर्वानन्द ने स्वामी ब्रह्मानन्द के लिए एक रिक्शा भेजा था, जो ऊपर से खुला था। एक दिन प्रात:काल महाराज को उसमें सवार होकर लिंगराज मन्दिर के दर्शन हेतु जाना निश्चित किया गया था। लिंगराज मन्दिर मठ से बहुत दूर नहीं है। हममें से कई लोग उनके पीछे पैदल ही चल दिए। हम सब मन्दिर में प्रवेश कर लिंग के समीप चले गए, लेकिन महाराज लिंग से कुछ दूरी पर ही रुक गए। मैं भी उनके पास ही रहा। वे वहीं खड़े हुए मानो ध्यानमग्न हैं। मठ के कोषाध्यक्ष साधु ने चढ़ावे के लिए पैसे नहीं लाए थे, इसलिए महाराज ने उसे डाँटा। इस कथन से मैं प्रभावित हुआ, क्योंकि यह सच है कि लयहीन व्यक्ति सभी प्रकार की गलतियाँ करता है। वापस लौटते समय मन्दिर के बाहर हमें एक अधेड़ उम्र की साध्वी मिली। महाराज ने उससे बात की और उसे आध्यात्मिक साधना पर अधिक ध्यान देने के लिए कहा। वह एक अजनबी या अर्ध-अजनबी लग रही थी; लेकिन महाराज जैसे उन्नत संन्यासी ने उस साध्वी को सचेत करना अपना कर्तव्य समझा।[६९]

स्वामी भूतेशानन्द ने एक घटना बताई थी, जो उन्होंने महाराज के सेवक से सुनी थी। भुवनेश्वर मठ के पास एक होटल था, जहाँ देश के विभिन्न भागों से आनेवाले तीर्थयात्री रुकते थे। अर्थात् सभी यात्री तीर्थयात्रा के लिए नहीं आते थे। बहुत-से लोग केवल दर्शनीय स्थलों की सैर करने या शहर के शोरगुल से दूर एक छोटे-से शहर की शान्ति का अनुभव करने के लिए आते थे। एक बार कलकत्ता से तीन युवक आकर उस होटल में ठहरे थे और उन्होंने मैनेजर से भ्रमण करने योग्य स्थानों के सम्बन्ध में पूछा। उसने वहाँ के प्रमुख मन्दिरों के नाम बताए और युवकों से कहा कि वे शहर में रामकृष्ण संघ की एक शाखा है, उसे भी देख सकते हैं। फिर उस मैनेजर नें उन्हें स्थानीय लोग मठाधिपति के बारे में क्या कहते हैं, वह सुनाया। उसने कहा, 'मठ के प्रमुख (अर्थात् महाराज) राजशाही अंदाज में रहते हैं। उनका हुक्का सोने से बना है। मठ का परिसर बहुत बड़ा है।' इस पर युवकों ने कहा, 'यह तो ठीक नहीं कि एक साधु इतने आलीशान तरीके से रहता हो। आप लोग उन्हें सबक क्यों नहीं सिखाते?' इस पर होटल मैनेजर ने कहा, 'हे भगवान! यह अकल्पनीय है। उनके पास बहुत बड़े-बड़े लोग आते हैं और मुझमें उस स्वामी के विरुद्ध कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं है।' इस पर युवकों ने कहा, 'तो ठीक है, हम किसी से नहीं डरते। हम जाकर उन्हें सबक सिखाएँगे।' मठ में स्वामी ब्रह्मानन्द अपने सेवकों के साथ बैठक में बैठे थे। ऐसा लग रहा था कि वे किसी की प्रतीक्षा कर रहे हों। उन्होंने अपने सेवकों से कह रखा था कि जब उनसे मिलने कोई आए, तो वहाँ कोई न रहे। वास्तव में कुछ ही मिनटों के बाद तीनों युवक आ गए। सेवक उन्हें महाराज के कमरे में ले जाकर बैठा दिये और पीछे का दरवाजा बंद करके चले गए। कमरे के अन्दर क्या हुआ, यह सेवकों को पता नहीं चला। उन्होंने केवल हँसी के ठहाके सुने। कुछ देर बाद वे युवक महाराज से विदा लेकर होटल लौट गए। लौटने पर मैनेजर ने उनसे पूछा कि उन्हें वह स्वामी कैसे लगे? युवकों ने उत्तर दिया, 'हमने अपने जीवन में पहली बार एक बहुत ही महान व्यक्ति को देखा है। वे अद्भुत प्रेम, सहानुभूति और समझ के धनी हैं। यह हमारे जीवन का एक अद्भुत तथा अनमोल अनुभव था।'

स्वामी अखिलानन्द ने अपनी स्मृतियों में लिखा है –

रामकृष्ण संघ में सम्मिलित होने के बाद मैं महाराज के साथ रहने के लिए भुवनेश्वर आया। महाराज का मेरे प्रति बहुत ही सौहार्दपूर्ण तथा उदार भाव था। वे मुझे सुबह-शाम भ्रमण करने ले जाते थे। साधारणत: हममें कोई बातचीत नहीं होती। मैं केवल उनके पीछे-पीछे जाता। एक दिन उन्होंने मुझे बताया की किस प्रकार अल्प धन में वाराणसी में रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम की स्थापना बीमार, निराश्रित और वृद्धों की सेवा के लिए की गई तथा वह आज किस प्रकार एक विशाल संस्थान के रूप में विकसित हुआ है। भगवान का कार्य कैसे विकसित होता है, इस बात को महाराज ने मुझे इस प्रकार बताया कि वह मेरे हृदय में सदा के लिए अंकित हो गया।

जब मैं भुवनेश्वर में था, तो मुझे कभी-कभी महाराज के लिए खाना बनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे विनोदपूर्वक मुझसे कहते, 'यहाँ रहकर मेरे लिए खाना पकाओ'। लेकिन उन्होंने मुझे मद्रास भेजने का निश्चिय कर लिया था। एक दिन जब मैं महाराज के सम्मुख बरामदे में खड़ा था, तो उन्होंने एक वरिष्ठ भक्त से कहा 'मैं इस लड़के को मद्रास भेज रहा हूँ, ताकि वह अँग्रेजी बोलना सीख पाए'। मैंने सपने में भी कभी नहीं सोचा था कि मुझे अमेरिका में सेवा करने जाना होगा। तत्पश्चात् कलकत्ता से एक युवा संन्यासी का पत्र आया। वह पत्र रामकृष्ण संघ के सचिव स्वामी सारदानन्द के निर्देश पर लिखा था। उसमें लिखा गया था कि मुझे कलकत्ता जाकर वहाँ एक शैक्षणिक संस्थान की स्थापना करनी होगी। एक धनी व्यक्ति ने इस कार्य के लिए धन देने का प्रस्ताव दिया था। जब विश्वविद्यालयीन शिक्षा पूर्ण कर मैं संघ में सम्मिलित होनेवाला था, तभी से मैं इस प्रस्ताव से जुड़ा हुआ था। जब यह प्रस्ताव आया, उसी रात महाराज ने मुझे मद्रास भेजने का निर्णय लिया। किन्तु मैं महाराज के साथ रहकर उनकी सेवा करना चाहता था। लेकिन उन्होंने कहा, 'क्या तुझे लगता है कि जो लड़के मुझसे दूर जाकर ठाकुर का कार्य कर रहे हैं, वे मेरी सेवा नहीं कर रहे हैं?' यह सुनकर मैं चुप रह गया।

बलराम बोस के पुत्र और परम भक्त रामबाबू ने महाराज से अनुरोध किया कि वे मुझे कुछ दिनों के लिए अपने पास रखें, ताकि मैं महाराज के दल के साथ पुरी जा सकूँ। इस पर महाराज ने कहा, 'नहीं राम, मैं उसे शीघ्र मद्रास भेजना चाहता हूँ।' मद्रास जाने से पहले मैंने महाराज से पूछा कि क्या वे शीघ्र ही मद्रास आएँगे। उन्होंने कहा कि वे आएँगे। मैंने उनसे यह भी पूछा कि क्या अवतार तथा साधु-सन्तों के सपने सच होते हैं? इस पर उन्होंने मुझसे कहा, 'हाँ, ऐसे अनुभव वास्तव में सच होते हैं।' फिर मैंने मद्रास के लिए प्रस्थान किया।

स्वामी निर्वाणानन्द लिखते हैं – भुवनेश्वर मठ के विशाल मुख्यद्वार का निर्माण चल रहा था। महाराज इसे सड़क पर खड़े होकर देखा करते। एक बार एक भक्त ने उनसे पूछा, 'महाराज, आप जंगल में इतना बड़ा महाद्वार क्यों बना रहे हैं?' उस समय लिंगराज मन्दिर के आसपास के क्षेत्र के अतिरिक्त मठ महुआ, कुचला (नक्स वोमिका), सागवान और अन्य पेड़ों के घने जंगल से घिरा हुआ था। महाराज ने मुस्कुराते हुए कहा, 'भविष्य में यह स्थान जाग्रत होगा। भुवनेश्वर ओडिशा के गतिविधिओं का केन्द्र होगा।' उन्होंने यह भविष्यवाणी सन् १९१८-१९१९ में की थी। सन् १९४० के दशक में उनकी यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। १९६० के दशक में भुवनेश्वर एक शहर के रूप में विकसित हुआ। १९८० के दशक में भुवनेश्वर जंगलों के स्थान पर एक पूर्ण विकसित भीड़भाड़ वाला शहर बन गया। १९३० के दशक में भी भुवनेश्वर जंगलों से घिरा था और वहाँ प्राय: बाघ देखे जाते थे। रेलवे स्टेशन की सड़क के दोनों ओर घना जंगल था। स्टेशन से आते समय हमें डर लगता।

भुवनेश्वर मठ में सागवान, साल, आम, कटहल और अन्य पेड़ों के जंगल में घूमते हुए महाराज कहा करते थे, 'यहाँ सर्दियों में बहुत सारे पक्षी आयेंगे।' वे हमें विभिन्न प्रकार के पक्षी दिखाते। 'वह कठफोड़वा है, वह कबूतर है, वह कालकलाची (काला भुजंगा) है, आदि।' जब मैं भुवनेश्वर मठ के अध्यक्ष के रूप में वहाँ था, तो मुझे महाराज की इन बातों का स्मरण होता था। दोपहर में जब सब कुछ शान्त होता, तब पक्षियों की चहचहाहट सुनाई देती थी, तो मुझे अपने भीतर एक खालीपन अनुभव होता। इस आश्रम समेत इस संसार की सारी वस्तुएँ क्षणभंगुर हैं। कभी-कभी मुझे सब कुछ सीखने और एक परिव्राजक साधु का जीवन व्यतीत करने की इच्छा होती। फिर मैं भुवनेश्वर मठ के निर्माण में महाराज के अथक परिश्रम के बारे में सोचता। साधु और भक्त यहाँ ठाकुर का नाम जपने आयेंगे। ठाकुर की वाणी का प्रचार-प्रसार सारे विश्व में होगा। साधकों को मोक्ष मिलेगा। ठाकुर, श्रीमाँ, स्वामीजी तथा महाराज; इन सबको हमसे यह अपेक्षा नहीं थी कि हम केवल अपना आनन्द या केवल

अपनी मुक्ति के लिए प्रयास करें। इसीलिए स्वामीजी ने हमें एक उच्चतम आदर्श दिया, 'अपनी मुक्ति के लिए तथा सबके कल्याण के लिए' और 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय'।

स्वामी तेजसानन्द अपनी स्मृतियों में लिखते हैं – 'महाराज दक्षिण भारत की यात्रा पर गए और १९२१ के अन्त में वे भुवनेश्वर लौट आए। भुवनेश्वर में उनकी देखरेख में एक मठ का निर्माण किया गया था। दिसम्बर के मध्य में मैं भुवनेश्वर जाने के लिए कलकत्ता आया। मैं भुवनेश्वर में महाराज के साथ क्रिसमस की छुट्टियों में एक सप्ताह के लिए रहना चाहता था। कलकत्ता में एक वरिष्ठ संन्यासी ने मुझसे पूछा, 'क्या तुम्हें महाराज से इसकी अनुमति मिली है? बिना किसी पूर्व सूचना के भुवनेश्वर मठ आना महाराज पसंद नहीं करते।' मैंने महाराज की अनुमति तो नहीं ली थी, पर उनके सान्निध्य-लाभ के लिए मैं व्यग्र था और आवश्यकता पडने पर मैं आश्रम के बाहर भी रहने के लिए तैयार था। भुवनेश्वर पहुँचने पर मेरे बिना बताये आने पर महाराज जरा भी असन्तुष्ट नहीं दिखे। मैंने उनके सान्निध्य में चार-पाँच दिन बड़े ही आनन्द में बिताये। कटक से कई अतिथि तथा भक्त वहाँ आये थे। महाराज ने व्यक्तिगत रूप से सबकी देखभाल की। मैं सुबह-शाम महाराज के साथ मठ के चारों ओर फैले विशाल जंगलों में टहलने जाया करता था। अन्य समय विशेषकर जब महाराज मौन रहते तब उनके पास जाने में डर लगता था। लेकिन टहलते समय महाराज अपनी सहजावस्था में रहते तथा खुलकर बातें करते। हमारे साथ दो-तीन भक्त भी टहलने आते।

एक दिन सुबह तड़के मैं महाराज के कमरे में गया। वे कमरे में अकेले थे। मुझे लगा कि मैं उन्हें परेशान तो नहीं कर रहा हूँ? लेकिन उन्होंने कृपापूर्वक मेरी बात सुनी। मैंने उनसे एक-दो प्रश्न पूछे। मैंने उनसे कहा, 'मैंने सुना है कि आपने काशी में हमारे कुछ साधुओं से कहा था कि यदि कोई तीन साल तक आध्यात्मिक साधना करता है, तो उसे निश्चित रूप से कुछ परिणाम मिलते हैं। मैं आपके निर्देशों का यथासम्भव पालन करने का प्रयास कर रहा हूँ। लेकिन मुझे पता नहीं कि मैं सही मार्ग पर हूँ या नहीं। मैं आपके निर्देशों का पालन यन्त्रवत् कर रहा हूँ। मैं केवल प्रयास कर सकता हूँ, लेकिन मुझमें आवश्यक एकाग्रता नहीं है। अब मैं क्या करूँ?' मेरी बातें सुनकर महाराज थोड़े भी नाराज नहीं हुए, अपितु उन्होंने मेरे भावी जीवन के लिए मुझे बहुमूल्य मार्गदर्शन कर मेरी पिपासा को शान्त किया।

मैं जब भुवनेश्वर में था, तब मठ में क्रिसमस की पूर्व सन्ध्या को ईसा मसीह की पूजा, बाइबिल का पाठ तथा भजन गाकर मनाया गया। इस कार्यक्रम में महाराज सम्मिलित हुए। उनकी उपस्थिति से एक अविस्मरणीय भाव का उदय हुआ था, जिसे वहाँ सबने अनुभव किया।

रामकृष्ण संघ में सम्मिलित होने के लिए महाराज से परामर्श हेतु मैं भुवनेश्वर गया था। एक दिन मैंने उन्हें अपने मन की यह बतायी। मेरी बात सुनकर उन्होंने मुझे एक सुझाव दिया। मैंने उन्हें स्पष्ट रूप से बताया कि मैं इस सुझाव का पालन क्यों नहीं कर सकता। इस पर उन्होंने कहा, 'ठीक है, मैं अप्रैल में कलकत्ता में रहूँगा। वहाँ आकर मुझसे मिलो।' मैंने दूसरों को बताया था कि मैं एक निश्चित दिन भुवनेश्वर छोड़ दूँगा, लेकिन मैंने महाराज को पहले से सूचित नहीं किया था, क्योंकि मैं उन्हें यह बताकर परेशान नहीं करना चाहता था। मैं पुरी होकर कलकत्ता जा रहा था। जाने के दिन मैं महाराज से विदा लेने गया और उन्हें अपने पुरी जाने के बारे में बताया। लेकिन मुझे पुरी जैसे पवित्र तीर्थ को जाने के लिए प्रोत्साहित करने के बदले महाराज ने स्वगत कहा, 'यह पुरी जा रहा है'। मुझे ऐसा लगा, मानो मेरे जाने से या उस दिन जाने से वे प्रसन्न नहीं हैं। परन्तु मेरा जाना निश्चित था। मैं उसे अन्तिम क्षण बदलना नहीं चाहता था। मैंने महाराज को प्रणाम कर उनसे विदा ली। यह मेरी उनसे अन्तिम भेंट थी।

स्वामी काशीश्वरानन्द अपने संस्मरणों में लिखते हैं – जब महाराज भुवनेश्वर अन्तिम बार गये, तब मैं भी भुवनेश्वर गया और अपने एक मित्र के किराए के मकान में रहा था। लेकिन मैं अधिक समय मठ में ही बिताता था, विशेषकर सुबह के समय। जब महाराज सुबह टहलने जाते, तो मैं नियमित रूप से उनके साथ छाता लेकर जाता। कभी-कभी रामलाल दादा भी उनके साथ होते थे। एक सुबह मैं महाराज के साथ अकेला था। वे मुख्यद्वार से बाहर निकले, लिंगराज मन्दिर को अपनी बायीं ओर रखकर तथा खेत और रेल की पटरी को पार कर उदयगिरि-खण्डगिरि के झाड़ीदार जंगल में पहुँचे। वे बहुधा जंगलों से घिरे उन सुनसान रास्ते पर टहलने जाते। उन सुनसान जंगल से गुजरते हुए उन्होंने अचानक मुझसे पूछा, 'यहाँ पतंग उड़ाने के बारे में तुम्हारा क्या विचार है?' मैंने कहा, 'यह बहुत बढ़िया रहेगा।' इस

पर उन्होंने मुझसे कहा, 'सुनो, इस बार जब तुम कलकत्ता जाओगे, तब मेरे लिए वहाँ से कुछ अच्छी पतंगें भेज देना।'

स्टार थियेटर ने एक बार भुवनेश्वर मठ की सहायता के लिए एक चैरिटी शो का आयोजन किया था। महाराज ने मुझसे कहा कि मैं अपनी क्षमता के अनुसार कुछ टिकटें बेचूँ। तभी महाराज के मन में एक विचार आया। जिन्हें मैं टिकट बेचूँगा, यदि वे मुझे छोटा समझकर मेरी उपेक्षा कर टिकट की कीमत न दें, क्या होगा? महाराज ने मुझे समझाते हुए कहा – 'उनसे पहले पैसे लेना, फिर उन्हें टिकट देना।' महाराज की इस बात पर मुझे बहुत हँसी आ रही थी। किन्नोरी और रामानुज इन दो नाटकों का आयोजन किया गया।

भुवनेश्वर मठ की स्थापना के उपरान्त नारायण अय्यंगार बैंगलोर से महाराज के साथ कुछ समय बिताने के लिए आया करते। मैं भी छुट्टियों में भुवनेश्वर गया था और अपना अधिकांश समय महाराज के साथ बिताता था। महाराज के एक भक्त विनोदबाबू पार्सल से सब्जियाँ तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ भुवनेश्वर भेजा करते थे। एक बार ऐसा ही पार्सल आया था, जब नारायण अय्यंगार भुवनेश्वर में थे। महाराज के सामने वह पार्सल खोला गया। उसमें बंगाल केमिकल्स के डेंटोन टूथ पाउडर का एक डिब्बा था। सम्भवत: वह श्री अय्यंगार के लिए था। सुबह के करीब साढ़े आठ बजे थे और श्री अय्यंगार अपनी दैनिक उपासना तथा ध्यान के लिए मन्दिर में थे। टूथ पाउडर का डिब्बा देखकर महाराज ने भवानी महाराज से कहा, ''देखो अय्यंगार मन्दिर में ध्यान कर रहे हैं। चुपचाप जाओ और यह डिब्बा उनके सामने रख दो। ध्यान रहे, वे तुम्हें देख न पायें। दबे पाँव वापस आओ और मन्दिर के सामने उनके आने की प्रतीक्षा करो। जब वे अपना ध्यान समाप्त करके उठें, तो जाकर उन्हें कहो, 'आपको ध्यान का यह फल मिला है।'' भवानी महाराज ने वैसा ही किया।

वे सर्दियों के दिन थे। महाराज भुवनेश्वर में थे। रोज सुबह वे टहलने जाते थे। प्राय: रामलाल दादा, बिपिन और दो-तीन अन्य लोग उनके साथ जाते थे। कभी-कभी वे अकेले ही जाते थे। मैं भी उनके साथ जाने की कोशिश करता। अधिकतर मैं उनका छाता लेकर जाता। वे भुवनेश्वर मठ के मुख्यद्वार से निकलकर अपनी बायीं ओर धान के खेतों को पार कर रेलवे लाइन पार करते और उदयगिरि-खण्डगिरि की ओर बढ़ते। कुछ दिन वे रेलवे स्टेशन जाते और मुख्य सड़क के बदले जंगली मार्ग से वापस आते।

एक सुबह वे टहलने निकल पड़े। उस दिन केवल मैं उनके साथ था। मैं उनका छाता लेकर चल रहा था। वे स्टेशन तक गए और फिर एक मोड़ लेकर जंगल के मार्ग से वापस निकले। सुबह के नौ या साढ़े नौ बज रहे थे। आठ-दस मिनट में ही हम मठ के पिछले दरवाजे पर पहुँच गए होते। अचानक हमें किसी पशु की दहाड़ सुनाई दी। महाराज डर के मारे मुझसे पूछने लगे, 'यह दहाड़ किस पशु की है? आशा है कि यह बाघ नहीं है।' मैं पशुओं की आवाज से बहुत परिचित नहीं था। इसलिए मैंने उत्तर नहीं दिया। लेकिन महाराज घबरा रहे थे। यह देख मेरी बोलती बन्द हो गयी थी। हमारे पास बचने के लिए केवल एक छाता था। हम दोनों घबराए हुए आगे बढ़ रहे थे। उस समय चार-पाँच स्थानीय लोग हमारे पास से गुजरे। वे लिंगराज मन्दिर की ओर से बरगरा गाँव की ओर जा रहे थे। महाराज ने उत्तेजित स्वर में उनसे पूछा, 'यह दहाड़ किस की है?' उन्होंने हमें बताया कि वह भैंसों की आवाज है और वे अपने मार्ग से चले गए। उनकी बातें सुन महाराज और भी घबरा गये। उन्होंने मुझसे कहा, 'यह तो और भी बुरी बात है। शीघ्रता से चलो और अपना छाता तैयार रखो।' उन्होंने भागने के लिए अपनी धोती बाँधी। कुछ दूर तक वे भागते रहे, कुछ दूर तक वे छोटी-छोटी कंटीली झाड़ियों या बड़े पेड़ों के पीछे छिपने का प्रयास भी करते रहे। मैं उनका एकमात्र साथी था। यदि हमने उनकी मुद्राओं और भावों का चित्र लिया होता, तो हमें उनके डर की तीव्रता का अनुमान हो जाता। अन्तत: श्रीठाकुर की कृपा से झाड़ियों के पीछे छिपकर हम पिछले दरवाजे से मठ में सुरक्षित पहुँचे। तब जाकर हमें शान्ति मिली। भुवनेश्वर में एक बार महाराज ने निडरता से चीते का सामना किया था और एक अन्य समय हमलावर बैल का।

स्वामी ब्रह्मानन्द ने एक बार बड़ी विनम्रता से श्रीमाँ सारदा देवी को पत्र लिखकर भुवनेश्वर मठ के उद्घाटन के लिए अनुमति तथा आशीर्वाद माँगा था। श्रीमाँ प्रसन्नता व्यक्त करते हुए समारोह के लिए आशीर्वाद दीं और ठाकुर से प्रार्थना की कि ठाकुर की कृपा से यह समारोह बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न होगा।[७०] **(क्रमश:)**

६९. स्वामी ब्रह्मानन्द ॲज वी सॉ हिम (अंग्रेजी) लेखक-स्वामी आत्मश्रद्धानन्द पृष्ठ-९६-९७ **७०.** श्रीसारदादेवी एण्ड हर डिव्हाईन प्ले (अंग्रेजी) लेखक- स्वामी चेतनानन्द पृष्ठ-५१०-५११)

सूक्ष्म और स्थूल

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

'आत्मा, आत्मन्, ब्रह्म' ये सब शब्द एब्स्ट्रेक्ट हैं। इसलिए आप उदाहरण देकर एब्स्ट्रेक्ट से कांक्रीट कर लीजिये। अगर यह भी किसी सिविल इंजीनियर की तरह होने वाला काम होता, जो उसको सीमेण्ट कांक्रीट से रि-इनफोर्स करके, कांक्रीट करके आत्मा को, ब्रह्म को दिखा दिया जा सकता, तो दिखा दिया जा सकता था, किन्तु ऐसा नहीं है।

मयूर विहार के किसी मोहल्ले से किसी ने लिखा है। सूक्ष्म और स्थूल क्या है? इसको समझ लेना चाहिये और एक जगह किसी ने इसका अर्थ पूछा है। 'सूक्ष्म' का अर्थ जो हम समझते हैं, ये सामान्य अर्थों में आध्यात्मिक जीवन में स्थूल और सूक्ष्म में नहीं है। जैसे ये टेबल है। ये टेबल अभी स्थूल है। ये ऐसा मेटल है, जिसको हम खुली आँखों से देख सकते हैं, पर यह टेबल जिस लकड़ी का बना है, उसमें फाइबर्स है, उस फाइबर्स को हम खुली आँख से नहीं देख सकते हैं। उसके लिए एक विशेष सूक्ष्मदर्शी यन्त्र है। माइक्रोस्कोप से हम देख सकते हैं। पर फाइबर्स जिस इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन से बने हैं, उनको हम माइक्रोस्कोप से भी नहीं देख सकते। पर फिर भी हम उसका अनुमान कर सकते हैं। ऐसे उपाय हैं, जिससे उनको देखा जा सकता है। हमारे शरीर में रक्त है, कट जाता है, तो खून निकलता है। माइक्रोस्कोप में आप देखिए तो श्वेत और लाल कोशिकाएँ दिखाती हैं। तो यह क्या सूक्ष्म है? यह खाली आँख से न दिखकर हमको माइक्रस्कोप से दिखता है, तो यह सूक्ष्म नहीं है।

सूक्ष्म क्या है? कोई भी वस्तु जिसका इन्द्रियों से ज्ञान हो सके, वह सूक्ष्म नहीं है। चाहे मन में ज्ञान हो सके। मैथेमेटिकल केलकुलेशन से हम इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन की स्थिति जान सकते हैं। यद्यपि हम उसको सामान्य माइक्रोस्कोप से नहीं देख पाते, पर गणितीय गणना से और उसके बाद के जो परिणाम आते हैं, उससे हम जानते हैं। जिनका ज्ञान मन सहित इन्द्रियों के द्वारा हो जाए, वह स्थूल है। जिसका ज्ञान इन्द्रियों से न हो सके, उसका नाम सूक्ष्म है।

आत्मा, मनुष्य का मन, प्रकृति, ये चीजें सूक्ष्म हैं, जो सामान्य इन्द्रियों और मन के द्वारा नहीं जानी जा सकती हैं। योगाभ्यास के द्वारा, यौगिक शक्ति के द्वारा जब शुद्ध मन होता है, उस शुद्ध मन से उसकी अनुभूति होती है। इसलिये आप आत्मा को इस कांक्रीट रूप में कभी भी नहीं देख पायेंगे और जब आप देखेंगे, तो वह अनात्म हो जायेगा। जो दृश्य है, वह अनात्म है। जो द्रष्टा है, वह आत्मा है। द्रष्टा सूक्ष्म है। दृश्य स्थूल है। कैसे होगा?

वेदान्त की भाषा में यह चिद्-जड़ग्रन्थि है। चिद् है और जड़ है। हम आत्मा को कांक्रीट करना चाहते हैं, जो चीज हमारे सामने हो। द्रष्टा कभी दृश्य नहीं होगा। किसी भी चीज को देखने के लिए 'त्रिफो' की क्रिया आपने वेदान्त से बहुत सुनी होगी। एक दृश्य है, एक द्रष्टा है और ज्ञान की प्रक्रिया है। एक चित्र सामने लगा है – दृश्य है, मैं उसको देखने वाला हूँ – द्रष्टा हूँ और देखने की प्रक्रिया है। वस्तु-ज्ञान में तीन चीजें हैं – दृश्य, द्रष्टा और ज्ञान की प्रक्रिया। आत्मा सबका द्रष्टा है। उसको कोई देख नहीं सकता, वह सबको देखता है। वह द्रष्टा है, इसलिए वह दृश्य नहीं हो सकता, इसलिए वह स्वप्रकाशित स्वयम्भू है। आप उसको कांक्रीट रूप में कभी नहीं देख सकते। इलेक्ट्रिसिटी की कांक्रीट हम नहीं देख सकते, पर उसका प्रभाव देख सकते हैं। आत्मा का प्रभाव मनुष्य अपने जीवन में अनुभव करता है। आपको वैज्ञानिक या दार्शनिक रूप से नहीं बता रहा हूँ। केवल दर्शन की दृष्टि से अगर आप विचार करेंगे, तो यह गलत है। पर व्यावहारिक दृष्टि से आपको बता रहा हूँ, आत्मा की कल्पना शक्ति से कीजिए। हमारे आपके भीतर शक्ति है। इससे आत्मा की शक्ति का अनुभव होता है। ○○○

पारिवारिक क्लेश से मुक्ति कैसे मिले?

अरुण चूड़ीवाल, कोलकाता

मैं अपनी आय का आधा भाग ही अपने उपभोग में लाता हूँ, शेष आधा भाग कुटुम्बीजनों के लिए ही छोड़ देता हूँ और उनकी कड़वी बातों को सुनकर भी क्षमा कर देता हूँ। जैसे अग्नि को प्रकट करने का इच्छुक पुरुष अरणीकाष्ठ का मन्थन करता है, उसी प्रकार इन कुटुम्बीजनों के कटुवचन मेरे हृदय को सदा जलाते रहते हैं। बड़े भाई बहुत बलशाली हैं, उन्हें अपने बल का घमण्ड रहता है। छोटा भाई अत्यन्त सुकुमार है, अत: वह परिश्रम से दूर भागता है। मेरा पुत्र अपने रूप-सौन्दर्य के अभिमान से ही मतवाला बना रहता है। इन सहायकों के होते हुए भी मैं असहाय हूँ।

मेरे अन्यतम दो मित्र के वैमनस्य के कारण मैं इनमें से किसी एक का पक्ष नहीं ले सकता। जिस प्रकार दो जुआरियों की एक ही माता, एक की जीत चाहती है, तो दूसरे की भी पराजय नहीं चाहती, उसी प्रकार मैं भी इन दोनों सुहृदों में से एक की विजय-कामना करता हूँ, तो दूसरे का पराजय भी नहीं चाहता। इस प्रकार दोनों पक्षों के हित चाहने के कारण सदैव कष्ट पाता रहता हूँ। अत: इन परिवार एवं मित्रजनों के क्लेश से दूर होने का कृपया मार्ग बतायें।

अपने पारिवारिक सदस्यों तथा नीजि स्वजनों से मानसिक कष्ट होना संसार के प्रत्येक मनुष्य की समस्या है। यहाँ उल्लेखनीय है कि उपरोक्त कष्टपूर्ण वचन भगवान श्रीकृष्ण नारदजी से कहते हैं एवं नारदजी से इस कष्ट का निवारण पूछते हैं। यहाँ बड़े भाई अर्थात् बलराम हैं, छोटे भाई अर्थात् गद। पुत्र है प्रद्युम्न और मित्र हैं आहुक एवं अक्रूर।

भगवान श्रीकृष्ण-पीड़ा का यह संवाद महाभारत के शान्तिपर्व के ८१वें अध्याय में है। इस अध्याय में युधिष्ठिर शरशय्याशायी भीष्म पितामह से पूछते हैं – ''कुटुम्बीजनों में दो दल बन जायें तथा मित्र शत्रु बन जायें, तो क्या किया जाय।''

एवमग्राह्यके तस्मिञ्ज्ञातिसम्बन्धिमण्डले।
मित्रेष्वमित्रेष्वपि च कथं भावो विभाव्यते।।

समस्या के समाधान के लिये नारदजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण परिमार्जन एवं अनुमार्जन द्वारा सम्बन्धी अथवा मित्र को मूक (शान्त) कर दें।

परिमार्जन अर्थात् क्षमा एवं कोमलता। अनुमार्जन अर्थात् सेवा-सत्कार द्वारा प्रेम उत्पन्न करना। जब कोई कटु वचन बोले, तो मधुर वचनों द्वारा उसका हृदय, मन, वाणी शान्त करना चाहिए।

ज्ञातीनां वक्तुकामानां कटुकानि लघूनि च।
गिरा त्वं हृदयं वाचं शमयस्व मनांसि च।।२२।।

महाभारत के शान्तिपर्व एवं अनुशासनपर्व में पितामह भीष्म युधिष्ठिर को समस्त सांसारिक समस्याओं के निराकरण का मार्ग बताते हैं। इस पर्व में मनुष्य के जीवन के समस्त आयामों का विवेचन एवं समाधान है।

यह सन्दर्भ रेखांकित करता है कि ईश्वर भी जब अवतार लेते हैं, तो उन्हें भी सामान्य जन सदृश मानसिक पीड़ा का बोध होता है। ○○○

आत्मा के विषय में यह सत्य पहले सुना जाता है। यदि तुमने इसे सुन लिया है, तो इस पर विचार करो। एक बार वह कर लिया है, तो इस पर ध्यान करो। व्यर्थ, निरर्थक तर्क मत करो! एक बार अपने को सन्तुष्ट कर लो कि तुम अनन्त आत्मा हो। यदि यह सत्य है, तो यह कहना मूर्खता है कि तुम शरीर हो, तुम आत्मा हो और उसकी अनुभूति प्राप्त की जानी चाहिए। आत्मा, अपने को आत्मा के रूप में देखो। अभी आत्मा अपने को शरीर के रूप में देख रही है। इसका अन्त होना चाहिए। जिस क्षण तुम यह अनुभव करने लगोगे, तुम मुक्त हो जाओगे।

आत्मा में कोई भी विकार नहीं है, वह असीम, पूर्ण, शाश्वत और सच्चिदानन्द है।

– स्वामी विवेकानन्द

गीतातत्त्व-चिन्तन

तेरहवाँ अध्याय (१३/८)

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था। अब प्रस्तुत है १३वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

भगवान कहते हैं कि आत्मा इन्द्रियग्राह्य नहीं है। इससे उसको असत् की श्रेणी में मत समझ लेना। आत्मा न सत् है और न असत् है। इसका यह अर्थ नहीं कि वह शून्य की श्रेणी में है। वह है, अवस्थित है और किस प्रकार अवस्थित है? उसके हाथ-पैर सब जगह हैं, इसलिए जहाँ भी हाथ और पैर देखो, तो समझ लो कि आत्मा वहाँ पर है। वहाँ पर यह क्षेत्रज्ञ है। उसी के रहने से हाथ हिल रहे हैं। पैर चल रहे हैं।

शंकराचार्य के जीवन की एक घटना है। सामने एक राजा का मृत शरीर पड़ा है। शंकराचार्य अपने स्थूल-शरीर को त्याग देते हैं, जो कि उनके शिष्यों के द्वारा एक गुफा में सुरक्षित रख लिया जाता है। उनका अपना स्थूल शरीर तो मृत हो गया और उन्होंने अपने सूक्ष्म-शरीर को राजा के मृत शरीर में प्रवेश करा दिया, तो उसमें प्राण संचारित हो गए, वह जी उठा। राजा उठकर अपने दरबार में चला गया। वस्तुत: तो वे भगवान शंकराचार्य हैं, ज्ञानी हैं। रानी उन्हें जीवित देखकर बहुत प्रसन्न होती है, पर उसे सन्देह होता है कि राजा का आचरण कुछ भिन्न है। वे कुछ अधिक तेजस्वी, अधिक विवेकवान, अधिक ज्ञानवान दिखाई देते हैं। राजा के मृतशरीर में शंकराचार्य ने अपने सूक्ष्म-शरीर को प्रविष्ट कराया अर्थात् मन को प्रविष्ट करवाया। मन

जहाँ रहेगा, वहीं प्राणवत्ता रहेगी, वहीं चैतन्यधर्म प्रगट हो जाएगा। आत्मतत्त्व जो सर्वव्यापी है, उसमें ये दो गुण सदैव विद्यमान रहते हैं। ये उसका स्वभाव है। जैसे जल का स्वभाव है – शीतलता। उसे आप गर्म कर भी दें, तो वापस शीतलता ग्रहण कर ही लेगा। विद्युत का स्पन्दन तो सब जगह रहता है, पर किसी माध्यम के आधार पर ही हम उसका अनुभव कर पाते हैं, उसी प्रकार यद्यपि चैतन्य आत्मा का धर्म है। उसका प्राणवत्ता का जो गुण है, वह आत्मा में हमेशा विद्यमान है, किन्तु वह प्रगट तब होता है, जब उसके सामने

मनोयन्त्र आता है। जहाँ पर भी मन होगा, वहीं पर जीवन का तत्त्व प्रगट हो जाएगा, चैतन्य तत्त्व प्रगट हो जाएगा। पुन: राजा की मृत्यु हुई और उसके स्थूल-शरीर से निकलकर शंकराचार्य ने अपने स्थूल-शरीर में प्रवेश किया और वह शरीर जीवित हो गया।

इस घटना से इस सत्य का पता चला कि जहाँ पर भी मन है, वहीं चेतना प्रकट होती है, प्राणवत्ता प्रकट होती है। कोई यह भी कह सकता है कि जब मन के साथ इस प्रकार प्राणवत्ता प्रगट होती है, उसके साथ ही चेतना दिखाई देती है, तो आप मन को जड़ क्यों कहते हैं? आप मन ही को चेतन क्यों नहीं कहते? इससे यह होगा कि जहाँ-जहाँ पर भी मन जाएगा, वहाँ-वहाँ वह चेतना का विस्तार करेगा। प्राणवत्ता या चेतना मन का अपना धर्म नहीं है। वह तो मन आत्मा के धर्म को प्रतिबिम्बित करता है। कहते हैं सीधे-सीधे यही क्यों न मान लें कि इस मन के अन्दर ही चेतना का गुण है, उसके भीतर ही प्राणवत्ता का धर्म है, तो जहाँ-जहाँ मन जाता है, वहाँ-वहाँ अपने साथ चेतना और प्राणवत्ता को ले जाता है। इस तर्क को मान लेने में दुविधा यह है कि यदि मन में ही चेतना हो, यदि मन ही चैतन्य हो, उसी में प्राणवत्ता का गुण हो, तब तो इस मन का कभी नाश हो ही नहीं सकता। जैसा कि हम जानते हैं कि मन का तो नाश होता है। समाधि की अवस्था में मन रहता नहीं है। यदि हम

मन को चेतना का पर्याय मान लें और कहें कि वह प्राणवत्ता के धर्मवाला है, तब मन को अविनाशी मान लेना पड़ेगा और मन का नाश नहीं होगा, तो मुक्ति की अवस्था कभी-भी प्राप्त नहीं हो सकती। जीव जो एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में जाता है, वह यात्रा स्थूल-शरीर की तो होती नहीं। उसके भीतर जो सूक्ष्म-शरीर है, जिसे साधारण भाषा में हम मन कहते हैं, वही उस यात्रा को सम्पन्न करता है।

क्षेत्रज्ञ पाँच कोशों का रचयिता

यह मनुष्य-शरीर पाँच कोषों से घिरा है। इस आत्मत्त्व के ऊपर पाँच कोशों का घेरा है। इस आत्मतत्त्व के ऊपर पाँच कोश हैं, पाँच परते हैं –

१. अन्नमय कोश – जो शरीर बाहर दिखाई देता है और अन्न के द्वारा पुष्ट होता है, वही अन्नमय शरीर कहलाता है।

२. प्राणमय कोश।

३. मनोमय कोश।

४. विज्ञानमय कोश।

५. आनन्दमय कोश।

जो वेदान्ती है, योगी है, वह इन पाँचों कोशों का भेदन करके आत्मा के पास पहुँचता है और इस सत्य को प्राप्त कर लेता है कि आत्मा इन पाँचों कोषों में लिपटा हुआ है। ये कोश उसके आवरण हैं। इन समस्त कोशों को चीरकर ही वह आत्मा का दर्शन पाने में समर्थ होता है। अन्नमय कोष तो स्थूल-शरीर है। सूक्ष्म-शरीर तीन कोशों से बना होता है – प्राणमय कोश, मनोमय कोश और विज्ञानमय कोश। आँखों से जो देखा जा सकता है अर्थात् शरीर, वह अन्नमय कोश है। अन्नमय कोश का राजा प्राण है। उसके भीतर हम प्राण का स्पन्दन देखते हैं। प्राण के द्वारा ही हमारे शरीर के भीतर रक्त का प्रवाह होता है। उसके भीतरवाले मनोमय कोश का राजा मन है। उसके भी भीतर विज्ञानमय कोश है जिसका राजा बुद्धि है, बुद्धितत्त्व। उसके भी भीतर प्रवेश करें, तो वहाँ होता है आनन्दमय कोश और उसका राजा है – अहंकार।

अब इनको तीन शरीरों मे बाँट दिया, तो यह जो अन्नमय कोश है, उसको स्थूल-शरीर कहते हैं। प्राणमय कोश, मनोमय कोश और विज्ञानमय कोश, इन तीनों को मिलाकर सूक्ष्म-शरीर कहते हैं। जो आनन्दमय कोश है, उसको कारण-शरीर कहते हैं। तात्पर्य यह है कि सूक्ष्म-शरीर और स्थूल-शरीर का आधार कारण-शरीर है। मनुष्य की जब मृत्यु होती है, तब उसका अन्नमय कोश जो स्थूल-शरीर है, वह तो वहीं पड़ा रहता है और सूक्ष्म तथा कारण-शरीर दोनों उसमें से बाहर निकल जाते हैं। यह कारण-शरीर ही सूक्ष्म-शरीर का आधार है। उसी आधार को लेकर सूक्ष्म-शरीर स्थूल-शरीर से बाहर निकलता है। वह सूक्ष्म-शरीर अन्य किसी स्थूल-शरीर में प्रविष्ट होता है, तो वहाँ पर मानो पुन: जीवन-तत्त्व आ जाता है, चैतन्य-तत्त्व आ जाता है। इस प्रकार उस जीव को नया शरीर प्राप्त होता है। तो जीव बदलता क्या है? केवल स्थूल-शरीर को ही, जिसे अन्नमय कोश कहते हैं। सूक्ष्म-शरीर और कारण-शरीर ये दोनों सम्मिलित होकर जीव का नाम लेते हैं और सदा रहते हैं।

अब यदि इस सूक्ष्म-शरीर या मन के भीतर प्राणवत्ता के गुण की उपस्थिति मान लें, उसमें चैतन्य का होना मान लें, तो प्राण का या चैतन्य का तो कभी नाश हो नहीं सकता। इसका अर्थ यह हुआ कि मन का कभी नाश होगा ही नहीं और मुक्ति की अवस्था भी कभी नहीं आएगी। शास्त्र और अनुभव के प्रतिकूल बात हो जाएगी। मुक्ति से तात्पर्य है कि जहाँ पर यह सूक्ष्म-शरीर और कारण-शरीर दोनों के दोनों नष्ट हो जाते हैं।

ज्ञान की साधना द्वारा संसार प्रवाह से मुक्ति

यह जीव अनेक योनियों से होकर गुजरता है। कई बार उसका मनुष्य रूप में ही जन्म होता है। तब एक ऐसी अवस्था आती है, जब उसके जीवन में ज्ञान इतना प्रगाढ़ हो जाता है कि उस ज्ञान के तेज के कारण उसके ये दोनों शरीर (सूक्ष्म-शरीर और कारण) जल जाते हैं। जिस जीवन में ये जल जाते हैं, नष्ट हो जाते हैं, वह जीवन जब समाप्त हो जाएगा, तब वह ज्ञान की परमोच्च अवस्था कहलाएगी। साधना के द्वारा ज्ञान के अनुभव का मनुष्य प्रयत्न करता है और प्रयत्न करते-करते एक दिन ऐसा आता है, जब वह समाधि में चला जाता है। समाधि में ज्ञान की तीव्रता इतनी होती है कि उसकी अग्नि में सूक्ष्म-शरीर और कारण-शरीर दोनों नष्ट हो जाते हैं। इसके लिए उदाहरण दिया जाता है कि मोटी रस्सी जब जलती है, तो उसका आकार वही मोटी रस्सीवाला रह जाता है, पर उससे बाँधने का काम नहीं लिया जा सकता। इसी प्रकार समाधि में सूक्ष्म-शरीर और उसका आधार कारण-शरीर जल तो जाते हैं, पर उनका रूप वही रहता है। रूप का वैसे ही रहने का अर्थ है कि ज्ञानी पुरुष के मन में जो भूख-प्यास आदि की वृत्तियाँ होती हैं, वे तो दिखाई देती हैं (अनुभव

में आती हैं), पर यदि हम उन वृत्तियों को पकड़ने जाएँ, तो उनमें वह तीव्रता नहीं होती, जो तीव्रता अभी है। अपने ज्ञान से जिसने सूक्ष्म-शरीर और कारण-शरीर को जला लिया, उसके सञ्चित कर्म तो जल जाएँगे, पर उसके प्रारब्ध कर्म जिससे यह शरीर मिला है, वे जब तक रहेंगे, तब तक शरीर भी चलेगा। इसकी एक दूसरी उपमा देते हैं। मान लीजिये मैं एक चक्का घुमा रहा हूँ। उसे घुमाते-घुमाते जब अचानक उसको घुमाना बन्द कर देता हूँ, तभी क्या वह रुक जाता है? नहीं। जो गति मैंने उसे दी उसके कारण थोड़ी देर तक वह चलेगा और उस गति के चुक जाने पर रूकेगा। समाधि अवस्था वाला पूर्ण ज्ञान भी ऐसा ही है, जैसे चलते पंखे का स्वीच बन्द कर देना। स्वीच बन्द करना, माने कर्मों का बनना बन्द कर देना। इसे कहते हैं – जीवन्मुक्तावस्था। ऐसा ज्ञानी जीवन्मुक्त होकर विद्यमान रहता है। इसका अर्थ हुआ कि उसके मन के भीतर कभी शोक और क्रोध दिखाई तो देते हैं, पर वे केवल पानी में खींची लकीर के समान होते हैं, जो दिखाई ही नहीं देती। पल भर बाद इसी प्रकार का संस्कार ज्ञानी के मन का होता है। उसके शोक या क्रोध की प्रतिक्रिया नहीं होती। **(क्रमशः)**

पृष्ठ २४८ का शेष भाग

दो महीने लग जाते हैं। कहने के लिए तो रथयात्रा मात्र एक दिन की होती है, लेकिन यह अक्षय तृतीया से आरम्भ होकर आषाढ़ मास की त्रयोदशी तक चलती है। उस समय अक्षय तृतीया के दिन से रथ-निर्माण, चन्दनयात्रा, देवस्नान पूर्णिमा, अणासरा, नवयौवन दर्शन, रथयात्रा और बाहुड़ा यात्रा आदि भी सम्मिलित हैं। सबसे रोचक बात यह है कि रथयात्रा से जुड़ी सारी यात्राएँ एवं उत्सव रथयात्रा की तरह ही बड़े आकार में सम्पन्न होते हैं। चतुर्धा देवविग्रहों का अदरपड़ा, सोनावेष और नीलाद्रिविजय दर्शन भी रथयात्रा की तरह ही बड़े आकार में अनुष्ठित होते हैं। प्रतिवर्ष रथ-निर्माण हेतु दारु संग्रह का कार्य वसन्त पंचमी से ही आरम्भ हो जाता है। जिस प्रकार से मानव-शरीर का निर्माण पंचतत्त्वों से हुआ है, ठीक उसी प्रकार रथ-निर्माण में पाँच तत्त्व रूप में काष्ठ (दारु), धातु, रंग, परिधान तथा शृंगार हेतु सजावट की सामग्रियों का प्रयोग होता है। पौराणिक मान्यता के अनुसार मानव-शरीर ही रथ होता है। रथी आत्मा होती है। सारथि बुद्धि होती है, लगाम मन होता है और रथ में जुड़े सभी अश्व मानव-इन्द्रियों के प्रतीक होते हैं। रथयात्रा के दिन चतुर्धा देवविग्रहों को पहण्डी विजय कराकर उन्हें रथारूढ़ किया जाता है। चतुर्धा देवविग्रहों के रथारूढ़ कराने के उपरान्त पुरी गोवर्धन मठ के १४५वें पीठाधीश्वर तथा पुरी जगतगुरु शंकराचार्य स्वामी निश्चलानन्द सरस्वती महाभाग अपने परिकरों के साथ पधारकर तीनों रथों का अवलोकन करते हैं तथा चतुर्धा देवविग्रहों को अपना आत्मनिवेदन प्रस्तुत करते हैं। उसके उपरान्त पुरी के गजपति तथा भगवान जगन्नाथजी के प्रथम सेवक दिव्य सिंहदेव महाराजा पालकी में पधारकर तीनों रथों पर छेरापहरा (सोने की मूठ वाले झाड़ू से रथों को साफ करना) करते हैं और चंदनमिश्रित जल का छिड़काव करते हैं। अपना आत्मनिवेदन करते हैं। रथों के साथ घोड़ों को जोड़ा जाता है तथा 'हरिबोल' तथा 'जय जगन्नाथ' के गगनभेदी जयकारे के साथ भक्तों द्वारा तीनों रथों को बारी-बारी से खींचने का सिलसिला आरम्भ हो जाता है। सबसे पहले बलभद्रजी का रथ तालध्वज रहता है, उसके साथ देवी सुभद्रा जी का रथ देवदलन रहता है तथा अन्त में भगवान जगन्नाथ का रथ नंदिघोष खींचा जाता है। भक्तगण पूरी सुरक्षा के बीच रथों को खींचकर गुण्डीचा मंदिर लाते हैं। गुण्डीचा मंदिर श्रीमन्दिर से लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित है, लेकिन तीनों रथों को गुण्डीचा मन्दिर पहुँचने में ६ घण्टे से २४ घण्टे भी लग जाते हैं। रथ खींचने के लिये नारियल की जटा से निर्मित मोटे-मोटे रस्से व्यवहार में लाए जाते हैं। भक्तों की भीड़ जब जोश में रथ खींचती है, तो गति को नियन्त्रित करने के लिए विशालकाय काष्ठखण्ड को ब्रेक के रूप में प्रयोग किया जाता है। ऐसी मान्यता है कि भगवान जगन्नाथ अपनी रथ यात्रा वैसे दीन-दुखियों, अनाथों, पतितों तथा भक्तों के लिए प्रतिवर्ष करते हैं, जिनको श्रीमन्दिर में जाना वर्जित होता है। जगन्नाथजी वैसे भक्तों को दर्शन देकर उन्हें मोक्ष प्रदान करते हैं। अपने भक्त सालबेग की मनोकामना को पूर्ण करते हैं। रथयात्रा के समय जगन्नाथजी अपनी मौसी के हाथों से बना हुआ पूड़ा-पीठा ग्रहण करते हैं। वे गुण्डीचा मन्दिर में सात दिनों तक विश्राम करते हैं। रथयात्रा के दिन भगवान जगन्नाथ को रथारूढ़ दर्शनकर भक्त मोक्ष को प्राप्त करते हैं। ○○○

साधुओं के पावन प्रसंग (७७)

स्वामी विविदिषानन्द

स्वामी चेतनानन्द

स्वामी विविदिषानन्द जी महाराज **(१८९३-१९८०)** की मन्त्रदीक्षा स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज से हुई थी। १९१९ ई. में वे भुवनेश्वर मठ में सम्मिलित हुए तथा १९२३ ई. में उनको स्वामी शिवानन्द जी महाराज से संन्यास-दीक्षा मिली। विविदिषानन्दजी बहुत विद्वान साधु थे। वे प्रबुद्ध भारत के सम्पादक भी बने थे। उनके बड़े भाई स्वामी आत्मबोधानन्द जी (सत्येन महाराज) थे। वे उद्बोधन आश्रम के अध्यक्ष थे। १९५० ई. में मैं आत्मबोधानन्दजी से मिला। वे बहुत सहानुभूतिशील संन्यासी थे।

स्वामी विविदिषानन्द जी १९२८ ई. में अमेरिका गये। उन्होंने पहले सैन फ्रांसिस्को वेदान्त सेन्टर का कार्यभार ग्रहण किया तथा बाद में सिऐटल केन्द्र के अध्यक्ष हुए।

१९७२ ई. में San Francisco centre's Women's Retreat House in Olema, California के उद्घाटन के समय स्वामी विविदिषानन्द जी महाराज से मैं पहली बार मिला।

उसके अगले वर्ष १९७३ ई. में श्रीरामकृष्ण देव की जन्मतिथि के उपलक्ष्य में व्याख्यान देने हेतु उन्होंने मुझे आमन्त्रित किया। मैंने उनको फोन पर कहा, ''महाराज, मैं सिऐटल अवश्य आऊँगा, लेकिन उसके लिए एक शर्त है।'' उनके द्वारा शर्त जानने पर मैंने कहा, ''आप मुझे वैंकूवर (कनाडा) ले जायेंगे, जहाँ पर स्वामी विवेकानन्द जहाज (Empress of India) से उतरे थे।'' सिऐटल से वैंकूवर की दूरी १२० माईल है।

१९७३ ई. के अप्रैल महीने में मैं सिऐटल गया। ठाकुर के उत्सव के अगले दिन महाराज मुझे अपने साथ लेकर वैंकूवर गये। हमने पूरा दिन वहाँ पर बिताया तथा रात को सिऐटल वापस आ गये। बाद में मैंने Vivekananda : From Bombay to Vancouver नामक एक लेख लिखा।

स्वामी विविदिषानन्द जी अधिक मात्रा में भोजन कर सकते थे तथा गाड़ी में बैठने के साथ ही सो जाते थे। वे बच्चे जैसे सरल-स्वभाव के थे। उनका बाथरूम बहुत-से खिलौना तथा मूर्तियों से सज्जित था।

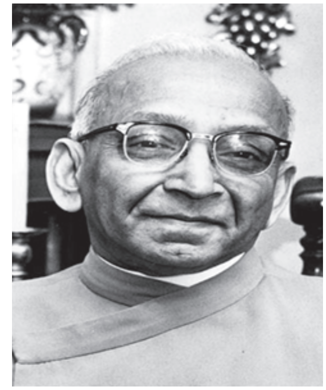

वे जब मन्दिर जाते तो मैं पीछे से देखता कि वे क्या करते है। वे पहले अगरबती जलाते और जप करते। तत्पश्चात् ध्यान करते तथा ध्यान के बाद आँखें बन्द करके ही अनेक देवी-देवताओं के स्तोत्र-पाठ करते। उनकी आँखों की रौशनी कम हो गयी थी। उनका सचिव उनको सतत पढ़कर सुनाया करता था।

एक दिन मैंने महाराज से पूछा, ''महाराज, स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज ने दीक्षा के समय आपको क्या-क्या उपदेश दिया था?'' प्रश्न सुनकर उनका चेहरा आनन्द से प्रफुल्लित हो उठा।

उन्होंने कहा, ''महाराज ने मुझसे कहा था, देखो, पूजा-पाठ-जप-ध्यान – ये चारों करना। इससे तुम्हारा आध्यात्मिक जीवन नीरस नहीं होगा।'' इसीलिए मैं अपने गुरुदेव के उपदेश का पालन करता हूँ।'' उनकी बातें सुनकर मैं मुग्ध हो गया। ये वृद्ध संन्यासी ५३ वर्ष पहले जो इनके गुरुदेव ने उपदेश दिया था, उसका अभी भी पालन कर रहे हैं। धन्य है उनकी गुरुभक्ति !

तदुपरान्त उपहार देने के लिए महाराज एक शापिंग मॉल में मुझे लेकर गये तथा एक जैकेट खरीद दिया। उन्होंने कहा, ''जब भी कोई संन्यासी हमारे आश्रम में आता है, तो मैं उसको कुछ-न-कुछ उपहार देता हूँ।''

इसके दो साल बाद उनको स्ट्रोक हुआ तथा वे तीन-चार वर्ष कोमा में थे। उनके शिष्यों ने उनको आश्रम में रखकर बहुत सेवा किया था। फरवरी, १९७८ ई. में मैं उनको देखने गया। सितम्बर, १९८० में उन्होंने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया। मैं उनकी स्मृति-सभा में सम्मिलित होने के लिए गया था। स्वामी विविदिषानन्द जी महाराज ने अपने जीवन के अन्तिम समय तक रामकृष्ण संघ की सेवा की। **(क्रमशः)**

पुस्तक समीक्षा

नर्मदा परिक्रमा : एक अन्तर्यात्रा

नर्मदा परिक्रमा : एक अन्तर्यात्रा

लेखिका – भारती ठाकुर (स्वामी विशुद्धानन्दा)

प्रकाशक – इन्दिरा पब्लिशींग हाउस, ५/२१, अरेरा कॉलोनी, हबीबगंज पुलिस स्टेशन रोड, भोपाल -११००३२

पृष्ठ – २३३, मूल्य- २५०

'नर्मदा परिक्रमा' नामक पुस्तक का नाम लेते ही मन में पावनकारिणी माँ नर्मदा मैया की स्मृति मानस-पटल पर आ जाती है। एक ओर अनन्त वर्षों से माँ नर्मदा ने अपने कल-कल निनाद की मंगलमयी ध्वनि से भक्तों के चित्त को शुद्ध कर उन्हें आह्लादित किया है, तो दूसरी ओर अपनी पावन वारि से उनके तन-मन को शीतल शुद्ध कर अपना निश्छल स्नेह, प्रेम और करुणा में आप्लावित किया है। जगत-जननी नर्मदा मैया की परिक्रमा करना और पग-पग पर उनकी कृपा-अनुभव करना और उसे तिथि सहित घटनाओं का निरुपण करना कठिन प्रतीत होता है। क्योंकि भक्त उस समय अपने भाव-राज्य में रहकर कृपा-तरंगों में ही तल्लीन रहता है। अब उसे कौन तिथि, स्थान और समय के प्रमाण सहित लिखे! किन्तु यह कठिन कार्य पूज्या भारती ठाकुर, जो अभी परिव्राजिका विशुद्धानन्दा हैं, ने 'नर्मदा परिक्रमा' नामक पुस्तक लिखकर किया है।

माताजी ने केवल नर्मदा मैया की परिक्रमा ही नहीं की, बल्कि अपने हृदयस्थ नर्मदा मैया से बातें भी करती रहीं। इसलिये इस 'नर्मदा परिक्रमा' नामक पुस्तक में उनकी अन्तरंग यात्रा के चित्रण मिलेंगे। इसमें उनकी अन्तरंग सखी के समय-समय पर अद्‌भुत परामर्श भी मिलेंगे, जो कभी चिन्तन करने को और कभी हँसने को विवश कर देंगे। लेखिका के 'मनोगत' रूप से प्रस्तुत प्रस्तावना से लगता है कि लेखिका का उद्देश्य केवल दर्शन करना ही नहीं था, अपितु नर्मदा के भावी परिवर्तित रूपों की कल्पना से वर्तमान रूप को संरक्षित करना और विस्थापित लोगों की मनोवेदना का अनुभव करना भी था। हम देखते भी हैं कि भविष्य में वे वहाँ के गरीब नर्मदा-तटवासियों की सेवा के लिये 'नर्मदालय' संचालित कर अपना सम्पूर्ण जीवन उनकी सेवा में समर्पित कर देती हैं। 'नर्मदा परिक्रमा' में पाठकों को लेखिका का नर्मदा मैया से संवाद मिलेगा। उनके दर्शन की उद्दीपना के साथ-साथ दर्शन की सन्तुष्टि मिलेगी और उनकी सन्तानों की सेवा की प्रेरणा मिलेगी। इसके अतिरिक्त आन्तरिक संवाद मिलेगा, जो एक सच्ची साधिका की पहचान है।

पुस्तक के प्रारम्भ में मनोगत शीर्षक में सुप्रसिद्ध मराठी कवि मंगेश पाडगाँवकर के काव्यांश उद्धृत करने योग्य है –

हर मौसम में हर फूलों में,
उस गगन में इस माटी में,
स्थिति-गति में, संघर्षों में,
सुख-दुखों में व्यथा-व्यथा में,
इस सृष्टि में, परिवेश में बिखरी
मानवता में, तुम्हें देखा है।
ओह ! मैं नादान, कैसे ढूँढू तुझे,
तुझे ही तजकर? कब चाहा मैंने,
दो मुझे मूर्त रूप में दर्शन !

लेखिका की यात्रा में नर्मदा मैया के ईश्वर-दर्शन की व्याकुलता, मानवता में ईश-दर्शन कर सेवा की प्रेरणा और आत्मदर्शन की आत्मसंगीत की ध्वनि दृष्टिगोचर होती है। लेखिका लिखती हैं, 'नर्मदा माई, इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द में हो तुम ... केवल तुम।' कितने अद्‌भुत शब्द हैं ये ! 'पुकार नर्मदा मैया की' नामक शीर्षक में मानो माँ ने पुकारा और जन्म-जन्मान्तरों की बिछुड़ी बेटी दौड़कर माँ से मिलने चल दी। पाठकों को लेखिका के परिक्रमा-काल में गरीब किन्तु सेवा-भावी निश्छल नि:स्वार्थ ग्रामवासियों की सेवा और विभिन्न सन्तों के दर्शन भी दृष्टिगोचर होंगे। धार्मिक आस्था, प्राकृतिक सौष्ठव और आध्यात्मिकता से समन्वित यह पुस्तक सबके लिये पठनीय और संग्रहणीय है। ऐसी पुस्तक की लेखिका, जिन्होंने अपना सर्वस्व माँ नर्मदा और उनकी सन्तानों की सेवा के लिये समर्पित कर दिया है, वे वन्दनीय हैं। ○○○

समीक्षिका – नम्रता वर्मा,
पी.आई.वी. विभाग, दिल्ली

समाचार और सूचनाएँ

रामकृष्ण मिशन को पुरस्कार मिला

८ फरवरी, २०२५ को कोलकाता में 'सन्मार्ग समाचारपत्र' द्वारा **रामकृष्ण मिशन** को उसके विशेष सेवा-कार्यों हेतु 'सन्मार्ग लीगेसी अवार्ड' से पुरस्कृत किया गया।

१८ फरवरी, २०२५ को पूज्य प्रेसीडेन्ट महाराज श्रीमत् स्वामी गौतमानन्द जी महाराज ने हावड़ा में रामकृष्णपुर घाट पर **विवेकानन्द द्वार** का उद्घाटन किया। १८९८ में स्वामी

विवेकानन्द के नवगोपाल घोष के घर पदार्पण के उपलक्ष्य में इस द्वार का निर्माण पश्चिम बंगाल सरकार में मन्त्री श्री अरूप राय ने कराया। इस उपलक्ष्य में आयोजित सभा को पूज्यपाद स्वामी भजनानन्द जी महाराज, स्वामी गिरीशानन्द जी महाराज, महासचिव महाराज और अन्य महानुभावों ने सम्बोधित किया।

रामकृष्ण मठ और मिशन के अन्य संस्थाओं के संयुक्त तत्त्वावधान में स्वामी विवेकानन्द के १८९७ में पाश्चात्य से कोलकाता पुनरागमन के उपलक्ष्य में एक कार्यक्रम का आयोजन किया गया, जिसमें उपरोक्त सभी महाराज लोगों ने व्याख्यान दिये। इस उपलक्ष्य में शाम को विशाल शोभायात्रा भी निकाली गयी।

रामकृष्ण मिशन दिव्यायन कृषि केन्द्र, मोराबादी, राँची के द्वारा ७ जनवरी से ३१ जनवरी तक पाँच किसान मेला का आयोजन किया गया, जिसमें कुल २७,५०० किसानों ने भाग लिया। **रामकृष्ण मिशन, पटना** में ११ से १६ फरवरी तक आश्रम के शताब्दी महोत्सव (१९२२-२०२२) का प्रथम चरण मनाया गया। स्वामी अद्भुतानन्द जयन्ती, १२ फरवरी, २०२५ को पूज्यपाद स्वामी गिरीशानन्द जी महाराज ने आश्रम के स्वागत द्वार का उद्घाटन किया।

३१ जनवरी, २०२५ को **विवेकानन्द विद्यापीठ, कोटा, रायपुर** में स्वामी विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में एक परिसंवाद का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. रमेन्द्रनाथ मिश्र और अध्यक्ष पं. सुन्दर लाल शर्मा विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. बंश गोपाल सिंह जी थे। स्वामी प्रपत्त्यानन्द और डॉ. ओमप्रकाश वर्मा जी वक्ता थे। बच्चों ने सुन्दर वैदिक पाठ किया और विद्यापीठ के संगीत शिक्षक कैलाश यादव ने भजन प्रस्तुत किये। मंच संचालन श्रीमती मनीषा चन्द्रवंशी ने किया।

रामकृष्ण मठ का नया केन्द्र

रामकृष्ण मठ का नया केन्द्र मध्यप्रदेश में प्रारम्भ किया गया है। पत्राचार का पता निम्नलिखित है –

स्वामी निर्विकल्पानन्द
अध्यक्ष,
रामकृष्ण मठ, रामकृष्णपुरम्,
ग्राम-पोस्ट – गोडहर, जिला – रीवा,
मध्यप्रदेश – ४८६००१
दूरभाष – ८९८९२ ५६६००

रामकृष्ण विवेकानन्द स्वाध्याय ट्रस्ट और **भारत कोकिंग कोल लिमिटेड, धनबाद** द्वारा स्वामी विवेकानन्द की जयन्ती १२ जनवरी को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनायी गयी। इसमें कई कार्यक्रम आयोजित हुये। सर्वप्रथम अध्यक्ष सह-प्रबन्ध निदेशक श्री समीरन दत्ता, निदेशक श्री मुरली कृष्ण रमैया, श्रीराकेश कुमार सहाय, विधायक श्री राज सिन्हा आदि ने परिसर में स्थापित स्वामी विवेकानन्द की मूर्ति पर माल्यार्पण किया। स्कूल के बच्चों ने प्रभात फेरी निकाली। सभा को स्वामी रामतत्त्वानन्द जी और अन्य महानुभावों ने सम्बोधित किया। २८ प्रतिभागियों को पुरस्कार स्मृतिचिह्न दिया गया। १५ स्कूलों के १५० बच्चों ने भाग लिया। इसका संयोजन स्वाध्याय ट्रस्ट के सचिव श्री बिकेश कुमार सिंह जी ने किया।